अपनी
विरासत जानिए
प्रतियोगिता विशेषांक
चन्दामामा
अप्रैल १९८३
Rs 2

चन्दामामा
अपनी विरासत जानिए प्रतियोगिता
१००,००० रुपये से अधिक मूल्य के पुरस्कार जीतिए
प्रधान पुरस्कार : 'इंडियन पॅनोरामा'. २ बालिग और २ बच्चों के लिए छुट्टियों की यात्रा का पूरा व्यय या नकद
रु. २५,०००
१२० द्वितीय पुरस्कार : (प्रति भाषा १०) बीएसए एसएलआर साइकल या एचएमटी क्वार्टज़ घडी या नकद रु. ६००
३०० तृतीय पुरस्कार : (प्रति भाषा २५) क्रूजर पेन सेट या एवरेडी कमांडर टॉर्च या कॅम्लिन पेंटिंग सेट.
१२०० प्रोत्साहन पुरस्कार : (प्रति भाषा १००) चन्दामामा एक वर्ष मुफ्त.
१२०० स्पॉट पुरस्कार : (प्रति भाषा १००) प्रत्येक भाषा में प्राप्त पहले १०० सही प्रवेशिकाओं के लिए अचरजभरी भेंट वस्तु.
जीतने की विधि : अब चन्दामामा पेश करते हैं एक ऐसी प्रतियोगिता जिस में भाग लेना मजेदार है और जीतना आसान है. नीचे बताए हुए चित्र भारतीय पुराण के सुविख्यात पुरुषों के हैं. सूचि में दिए हुए नाम और चित्र की सिर्फ जोडी लगानी है. बाद में वाक्य पूरा कीजिए – "मुझे चन्दामामा भाता है क्योंकि..." और प्रतियोगिता कूपन सहित अपनी प्रवेशिका हमारे पते पर भेज दीजिए. (प्रतियोगिता कूपन चन्दामामा के अप्रैल और मई १९८३ के अंकों में उपलब्ध) याद रहे, प्रवेश शुल्क नहीं है और एक ... जितनी भी प्रवेशकाएं भेज सकता है. सिर्फ हर ... प्रतियोगिता कूपन जोडना अनिवार्य है.
प्रतियोगिता के नियम और शर्तें : १) सिर्फ अधिकृत प्रवेशिका पत्र पर भेजे जवाब ही स्वीकार्य हैं. २) आप चाहे जितनी प्रवेशिकाएं भेज सकते है. हर प्रवेशिका के साथ एक प्रतियोगिता कूपन भेजना अनिवार्य है. प्रतियोगिता कूपन चन्दामामा के केवल अप्रैल और मई १९८३ के अंकों में उपलब्ध होंगे. ३) जिन भाषाओं में चन्दामामा प्रकाशित होता है, उन में से किसी भाषा में प्रवेशिकाएं स्पष्ट रूप से भरनी चाहिए ४) प्रवेशिकाएं हमारे पास दि. ३१ मई १९८३ को या उस के पहले पहुँच जानी चाहिए. ५) विलंबित, लापता या बिगडी हुई प्रवेशिकाओं के लिए संयोजक जिम्मेदार नहीं. ६) प्रवेशिकाएं सिर्फ सामान्य डाक से ही भेजनी चाहिए. ७) चन्दामामा प्रकाशन तथा हिंदुस्तान थॉपसन असोसिएट्स् के कर्मचारी तथा उन के परिवार छोड कर सभी भारतीय नागरिकों के लिए प्रतियोगिता खुली है ८) प्रवेशिकाओं की परीक्षा स्वतंत्र पंचों का एक गुट करेगा जिस का निर्णय अंतिम होगा. इस के संबंध में किसी भी प्रकार का पत्रव्यवहार नहीं किया जाएगा. ९) विजेताओं को व्यक्तिगत रूप से डाक द्वारा सूचित किया जाएगा.

प्रवेश पत्र

जैसे कि मिसाल की तौर पर बताया गया है चित्र और नाम की जोडी लगाइए :

१) अर्जुन २) नारद ३) विश्वामित्र ४) हनुमान ५) रावण ६) वसिष्ठ

मुझे चन्दामामा भाता है क्यों कि .... (१० शब्दों में)

नाम ________________ उम्र ________

पता ________________________________

____

____

**भेजने का पता : प्रतियोगिता संयोजक
चन्दामामा पब्लिकेशन्स प्रा. लिमिटेड
१८८, अर्कोट रोड, मद्रास-६०० ०२६.**

चन्दामामा
अपनी विरासत जानिए
प्रतियोगिता कूपन

हर प्रवेशिका के साथ एक प्रतियोगिता कूपन जोडना अनिवार्य है.

जल्दी कीजिए !
प्रवेशिका
बंद तिथि:
३१ मई १९८३

आलिमेसा

बेबी मसाज आयल

मुझे जो भी चाहिए
बढ़िया ही चाहिए ।

अपनी मालिश के लिए मुझे चाहिए सिर्फ आलिमेसा-इससे कम कुछ नहीं. आखिर मैं मजबूत इरादे का इन्सान हूँ-मेरा शरीर और हड्डियाँ भी खूब मजबूत होनी चाहिए ।

अगर आप सोचते हैं कि मुझे किसी और चीज से मालिश के लिए राजी कर लेंगे तो मेरे निजी सचिव से मुलाकात का समय निश्चित करके मिलने आ सकते हैं.

निर्माता :

शलक्स कैमिकल्स

प्रबंध कार्यालय: ए-30, विशाल एन्कलेव,
नजफगढ़ रोड, नयी दिल्ली-110027

हर बड़े कैमिस्ट व
जनरल स्टोर पर उपलब्ध
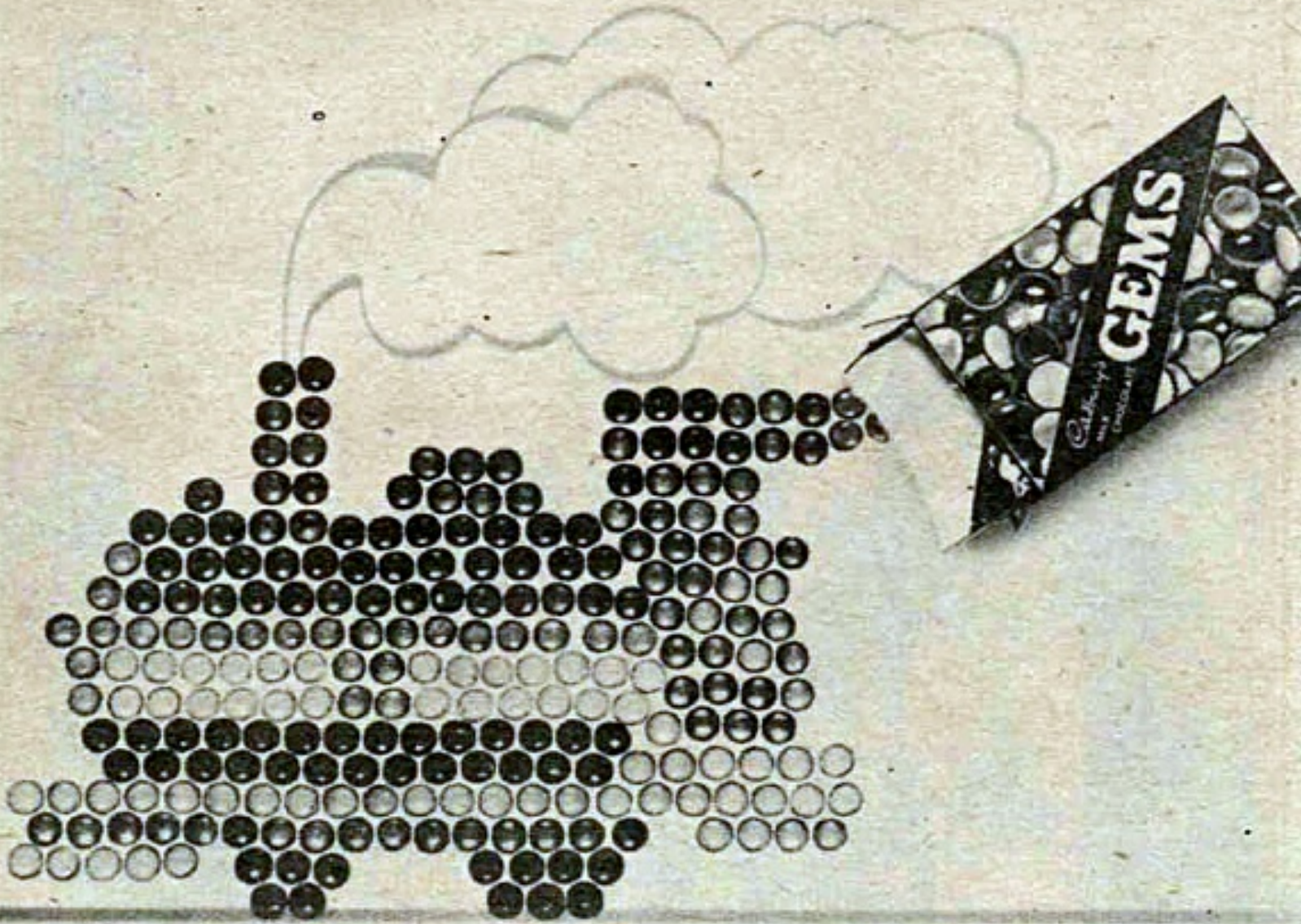
1980-81

सिनथैटिक / सुगंध
रहित

BDK599

HAVE A DATE WITH THE ADVENTUROUS SUPER HEROES
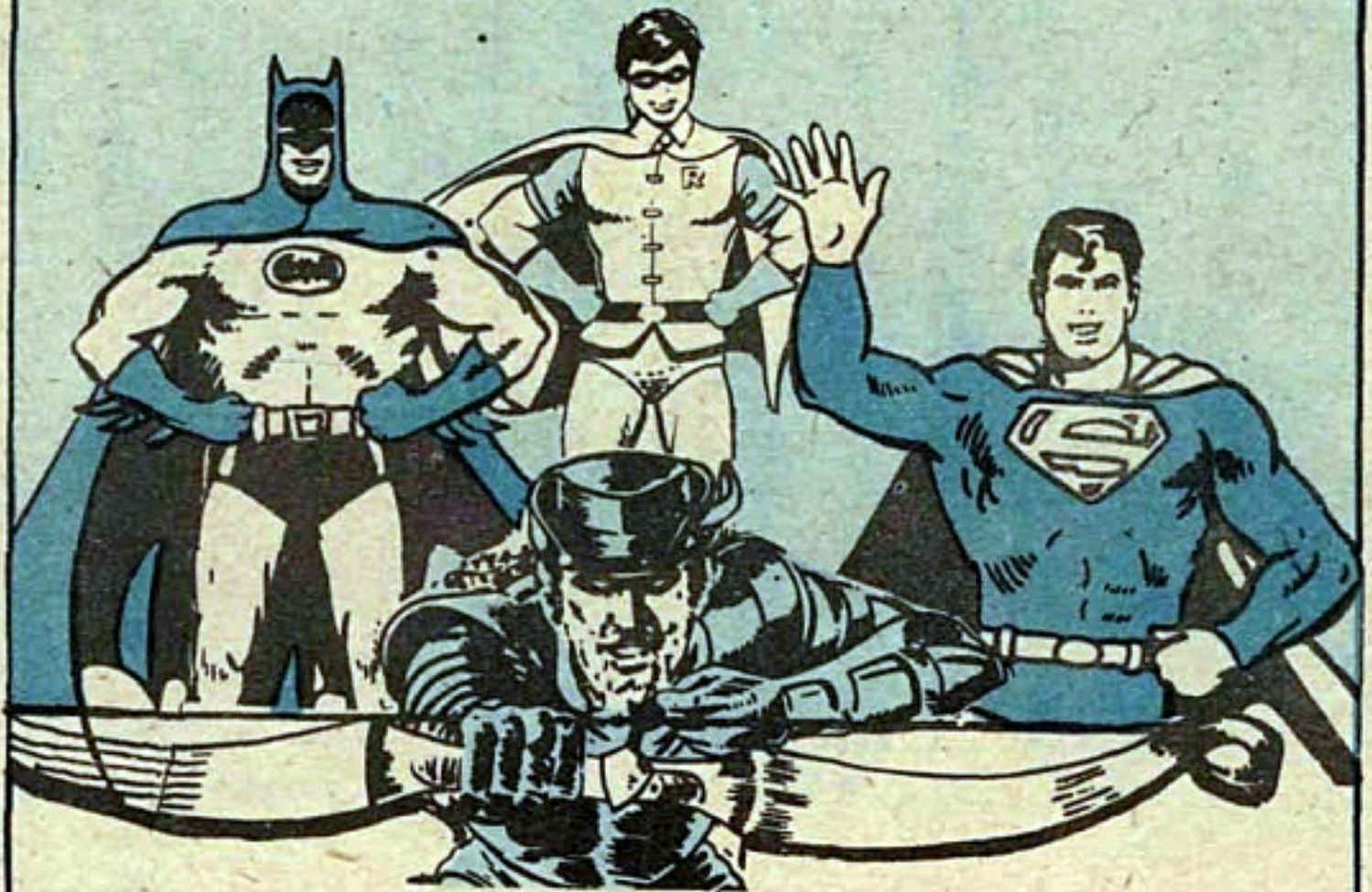
IN

SUPER COMICS

The New Fortnightly

NOW IN HINDI TOO

Every issue brings you the Sagas of their Heroic exploits

Available from
all news dealers at only Rs. 2.00 a copy.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

पाठकों से निवेदन!

'चन्दामामा' पत्रिका के संचालन में–खासकर प्रकाशन संबंधी सारी चीज़ों के मूल्य इधर कुछ दिनों से हद से ज्यादा बढ़ते गये! फिर भी हमने इस बात का पूरा प्रयत्न किया कि पत्रिका का मूल्य बढ़ा कर पाठकों पर उसका बोझ न डाले। यही कारण है कि हम आज तक उसी मूल्य पर हमारे पाठकों तक पत्रिका पहुँचाते रहें, लेकिन अब विवश होकर हम इस अंक से पत्रिका का मूल्य दो रुपये कर रहे हैं!

हमारा विश्वास है कि हमारे सभी प्रिय पाठक एवं एजेंट सहृदयता पूर्वक इस स्थिति को समझ कर पूर्ववत् हमारे साथ सहयोग देंगे!

वर्ष : २५ अप्रैल १९८३ अंक : ८

एक प्रति : २-०० :: वार्षिक चन्दा : २४-००

मूर्खों का गाँव

रमानन्द एक अनाथ बालक था। बचपन में ही उसके माँ-बाप मर गये थे, इसलिए वह एक गुरुकुल में पहुँचा। गुरुजी की सेवा-शुश्रूषा करते अपनी जिन्दगी बिताने लगा।

गुरुजी बड़े ही सज्जन थे। वे अमीर और गरीब का भेदभाव नहीं रखते थे। उन्होंने रमानन्द को भी अमीर बेटों के बराबर शिक्षा दी। बीस साल की उम्र तक रमानन्द ने सारी विद्याएँ सीख लीं।

एक दिन रमानन्द को अपने पास बिठाकर गुरुजी ने उपदेश दिया—"बेटा, तुम बड़े ही समझदार और बुद्धिमान हो। तुम धन के लोभ में न पड़कर देहातों में जाओ और वहाँ के बच्चों को शिक्षित बनाओ। गाँववाले प्रेम पूर्वक तुम्हें जो कुछ भेंट करें, उसे ले लो। उसी से संतुष्ट हो जाओ।"

"गुरुजी, मैं आप की आज्ञा का पालन करूँगा। आप सब से पहले जिस गाँव में जाने को कहेंगे, मैं उसी गाँव में जाऊँगा।" रमानन्द ने विनयपूर्वक जवाब दिया।

"तुम चाहे किसी भी गाँव में जाओ, पर मूर्खपुर में मत जाना।" गुरुजी ने उत्तर दिया।

इसके बाद रमानन्द गुरुजी से विदा लेकर गुरुकुल से रवाना हुआ। होनी ऐसी थी कि वह संध्या तक मूर्खपुर ही पहुँचा। रात हो जाने के कारण रमानन्द को उसी गाँव में रहना पड़ा। वह एक गृहस्थ के घर में टिक गया। गृहस्थ ने उससे पूछा—"बेटा, तुम कौन हो? क्या करते हो?"

रमानन्द ने गृहस्थ को अपना परिचय दिया। गृहस्थ झट से रमानन्द को प्रणाम करके बोला—"शास्त्रों में लिखा है कि उम्र में छोटा होने पर भी अगर विद्वान

"वसुंधरा"

हो, तो उसे हाथ जोड़कर प्रणाम करना चाहिए। हमारे गाँव में कोई अच्छे गुरु नहीं हैं। इसलिए लड़के बिगड़ते जा रहे हैं। आप यहीं रहकर हमारे गाँव के बच्चों को पढ़ाइए।"

रमानन्द को अपने गुरुजी की चेतावनी याद आई, इसलिए उसने साफ़ इनकार कर दिया कि वह उस गाँव में रहना नहीं चाहता। लेकिन सबेरा होते-होते गाँव के बहुत सारे लोग तरह-तरह की भेंटें लेकर रमानन्द के पास पहुँचे और उससे बच्चों को पढ़ाने की प्रार्थना की।

उन भेंटों को देखते ही रमानन्द के मन में लोभ पैदा हो गया। उसने सोचा कि बच्चों को पढ़ाने के लिए इस गाँव के लोग ऐसा दबाव डालते हैं तो इन बच्चों को पढ़ाना मेरा कर्तव्य है। यों सोच कर रमानन्द ने अपने गुरु को दिया वचन तोड़ दिया। गाँव के मुखिया ने रमानन्द के रहने के लिए एक छोटे से मकान का इंतजाम कर दिया। गाँव में पाठशाला खोलने के पहले मुखिया ने रमानन्द को चेतावनी दी—"अगर तुम्हारी पाठशाला ठीक से न चली तो तुम्हें सामनेवाले उस बड़े मकान में रहना पड़ेगा।"

मुखिया की बातें रमानन्द की समझ में न आईं। मूर्खपुर के बच्चे बड़े ही नटखट थे। रमानन्द के लाख समझाने पर भी उसकी बातों की परवाह किये बिना शोरगुल मचाते रहते थे। रमानन्द ने कुछ ही समय में सब बच्चों को परख लिया। उसने देखा कि सभी बच्चे नटखट नहीं हैं, बल्कि उनमें थोड़े से ही बच्चे नटखट हैं जो बाक़ी लड़कों को बिगाड़ रहे हैं, उसने नटखट बच्चों को बाक़ी बच्चों से अलग रखा और उन्हें एक दिन कड़ी सज़ा दी। उसी दिन रात को गाँव के मुखिया ने रमानन्द के घर पहुँच कर पूछा—"तुमने बच्चों को क्यों पीटा?"

"बच्चों ने शोरगुल मचाया, इसलिए मैंने पीटा।" रमानन्द ने जवाब दिया।

"बच्चे शोरगुल नहीं मचाएँगे तो क्या हम और तुम मचाएँगे?" मुखिया ने गुस्से में आकर कहा।

रमानन्द की समझ में न आया कि क्या जवाब दे। इस बीच मुखिया बोला– "शास्त्रों में लिखा है कि बच्चे भगवान के समान होते हैं। इसलिए तुम आइंदा इनको मत पीटना।"

इसके बाद रमानन्द ने पूरी कोशिश की कि बच्चों को न पीटे और उनको डांटा तक नहीं। इसका नतीजा यह हुआ कि एक भी बच्चा कुछ सीख न पाया।

कुछ दिन बाद मुखिया रमानन्द के घर पहुँचा और शिकायत की–"गाँव के लोगों का कहना है कि बच्चे पढ़ाई में कच्चे निकले हैं। वे कुछ भी सीख नहीं पाये हैं।"

"आप लोगों के बच्चे अगर पढ़ाई में कच्चे निकले तो इसके लिए जिम्मेवार मैं नहीं हूँ। उन बच्चों के माँ-बाप हैं।" रमानन्द ने साफ़ कह दिया।

"तो बताओ, हमें क्या करना होगा?" मुखिया ने रमानन्द से पूछा।

"गाँव के सारे लोगों को एक जगह आप इकठ्ठा कीजिए। मैं उन्हें समझाऊँगा कि उनके बच्चों को पढ़ाई में कुशल बनाने के लिए क्या करना होगा?" रमानन्द ने कहा।

रमानन्द की इच्छा के अनुसार गाँव के बुज़ुर्ग एक जगह इकट्ठे हुए। रमानन्द ने उन्हें समझाया कि बच्चों को किसी तरह अनुशासन में रखना है। यह भी समझाया कि घर पर उनकी पढ़ाई कैसे होती है, उन्हें कैसे काबू में रखना है और ज़रूरत पड़ने पर उन्हें कैसे दण्ड देना है।

"अगर माँ-बाप बच्चों की पढ़ाई और अनुशासन का काम देख लें तो फिर उनके वास्ते एक गुरु और पाठशाला की क्या ज़रूरत है?" मुखिया ने पूछा।

वहाँ पर इकट्ठे हुए ज्यादातर बुज़ुर्गों के मन में भी यही संदेह पैदा हुआ। रमानन्द

ने कई प्रकार से उन्हें समझानें की कोशिश की, मगर वे बार-बार यही सवाल उसके सामने रखते गये। लाचार होकर रमानन्द बोला—"मेरे समझाने पर भी आप समझ नहीं पा रहे हैं। मैं क्या करूँ?"

मुखिया ने कहा—"जब तुम बड़ों की समझ में आने लायक़ बात नहीं कर सकते तो बच्चों के समझने लायक़ शिक्षा क्या दे सकते हो? इसलिए तुम्हें कुछ दिन तक उस बड़े मकान में रहना ही पड़ेगा।"

रमानन्द के मन में पहले से ही यह कुतूहल था कि देखें, आखिर उस बड़े मकान में है क्या? इस ख़्याल से रमानन्द उस बड़े मकान के पास पहुँचा, उसने ज्यों ही उस मकान के अन्दर क़दम रखा, त्यों ही मुखिया ने बाहर से कुंडी चढ़ा दी। मकान के अन्दर कुछ लोग पहले से ही थे। उनमें से एक आदमी रमानन्द को देख जोर से चिल्ला उठा—"हमारे एक नये दोस्त यहाँ पर आ गये हैं।"

"आप लोग कौन हैं?" रमानन्द ने पूछा।

"इस गाँव के बच्चों को पढ़ाने के लिए आकर मुँह की खाये हुए लोग हैं हम। इस कारागार में रोज कुछ बच्चे आ जाते हैं और वे हमें पाठ पढ़ाते हैं कि सच्चे गुरु कैसे होते हैं। उनके साथ चार मज़बूत पहलवान भी होते हैं।" दूसरे ने कहा।

रमानन्द ने सोचा कि गुरुजी की बात का उल्लंघन करने की सजा मिल गई है।

अब यह उपाय सोचना होगा कि वहाँ से कैसे निकले। वे लोग कुल मिलाकर दस आदमी थे।

दूसरे दिन वहाँ के गुरुओं को पाठ पढ़ाने के लिए बच्चे आ पहुँचे। रमानन्द उन बच्चों से बोला—"तुम लोग बड़े ही भाग्यवान हो, क्यों कि बिना किसी तरह की मेहनत के एक घंटे के अंदर सभी शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने का तुम लोगों को अच्छा मौक़ा मिल गया है!"

एक बच्चे ने पूछा—"बताइये, सो कैसे?"

"इतने सारे गुरु अगर एक स्वर में सरस्वती के नाम का स्तोत्र करें तो देवीजी प्रसन्न होकर चारों तरफ़ फैले लोगों को विद्या का दान देंगी।" रमानन्द ने कहा।

बच्चों ने जाकर यह बात गाँव के बुजुर्गों को बताई। थोड़ी ही देर में बड़े मकान के सामने की जगह लोगों की भीड़ से खचा-खचा भर गयी।

रमानन्द उच्च स्वर में बोला—"जहाँ पर मूर्खता होगी, वहाँ पर सरस्वती न होंगी। हम ग्यारह लोग सरस्वती देवी के नाम का स्तोत्र करते आगे चलते हैं, पर जो लोग सरस्वती देवी की कृपा चाहते हैं, वे लोग कृपया हमारे पीछे चलें।"

रमानन्द के साथ सारे गुरु उच्च स्वर में सरस्वती देवी की स्तुति करते हुए गाँव की सीमा की तरफ़ चल पड़े। उनके पीछे मूर्खपुर के लोग भी निकल पड़े।

गाँव की सीमा को पार करते ही रमानन्द ने कहा—"महाशयो, सुनिये, सरस्वतीदेवी का कहना है कि हम गुरु लोग यहाँ से जल्दी भाग जायें, और आप लोग यहीं पर रुक जायें!" यों कहकर वह दस गुरुओं के साथ वहाँ से भाग खड़ा हुआ।

इसके बाद रमानन्द ने अपनी विद्या का प्रदर्शन करके किसी राजा का अश्रय प्राप्त किया। उसने राजा को मूर्खपुर के लोगों के साथ अपने अनुभव सुनाकर उस गाँव के लोगों को जबर्दस्ती शिक्षा देने का प्रबंध कर पाया।

[१७]

[शिवदत्त थोड़ी देर समुद्रकेतु के अनुचरों के साथ युद्ध करके जंगल में भाग गया। रास्ते में उन्हें देवमाया नामक औरत दिखाई दी। उसके मुंह से शिवदत्त ने मकर मंडल का वृत्तांत जान लिया। बज्रमुष्टि अपने साथ शिवदत्त के दो अनुचरों को लेकर जंगल का रास्ता दिखाते आगे बढ़ा। उसे समुद्री डाकुओं का दल दिखाई दिया। बाद...]

वज्रमुष्टि ने खारे जलवाली नदी के उस पार से आनेवाला अट्टहास सुना, तब अपने अनुचरों की ओर मुड़कर बोला–"यह अट्टहास समुद्रकेतु के अनुचरों का होगा। वे लोग चाहे कोई भी क्यों न हो, मगर ऐसा लगता है कि वे सभी शराब के नशे में मदहोश हैं। तुम दोनों मेरे लौटने तक यहीं पर रह जाओ। मैं अभी उन लोगों का पता लगा कर लौट आता हूँ।" यों समझा कर वह ज़मीन पर रेंगते हुए नदी के किनारे पहुँचा और एक डोंगी पर क़ब्ज़ा कर लिया।

चन्द मिनटों में वज्रमुष्टि नदी के उस पार पहुँच गया। उसने डोंगी को किनारे वाले एक पेड़ से बांध दिया। फिर रेंगते हुए आगे बढ़ा। उसने देखा कि एक समतल मैदान में समुद्रकेतु के दस-बारह अनूचर अपने हथियारों को एक जगह

रखकर दारू पी-पीकर शोरगुल मचा रहे हैं। उनका वध करने के लिए यही अच्छा मौक़ा समझ कर वज्रमुष्टि एक झाड़ी की ओट से आगे कूद पड़ा, 'जय कालकेय की!' चिल्लाते हुए डाकुओं पर अचानक हमला कर दिया।

डाकू यह समझ न पाये कि उन पर यह कैसा खतरा आ पड़ा है, इस बीच वज्रमुष्टि की तेज़ धारवाली तलवार ने छह-सात डाकुओं के सर काट डाले। इतने में चार-पांच डाकू होश में आकर भयंकर गर्जन करते हुए अपने हथियारों की ओर बढ़े, मगर मौक़ा पाकर वज्रमुष्टि ने उन सब के सर काट डाले।

उनमें से एक डाकू बच कर खारे जलवाली नदी की ओर भाग खड़ा हुआ। लेकिन वज्रमुष्टि ने उसको भी नहीं छोड़ा। उसने सोचा कि अगर उनमें से एक भी डाकू बच जाएगा तो वह शिवदत्त के दल के लिए खतरे का कारण बन सकता है।

इस विचार से वज्रमुष्टि 'जय कालकेय की' चिल्लाते हुए भागनेवाले डाकू का पीछा करने लगा। बेहथियार और नशे में मदहोश वह समुद्री डाकू पीछे मुड़कर वज्रमुष्टि को देख डर गया और भय कंपित हो चिल्ला उठा—"बाप रे बाप! यह कमबख्त मेरा पीछा कर रहा है। मैं मर गया।" फिर वह एक ही छलांग में नदी में कूद गया।

वज्रमुष्टि भी उसके पीछे नदी में कूदने को तैयार हो गया, लेकिन इस बीच नदी में तैरनेवाले एक मगरमच्छ ने डाकू पर हमला कर दिया और उसको अपने मुँह में दबा कर नदी में गहरे जल की ओर भाग गया।

वज्रमुष्टि अट्टहास करते हुए बोला—"समुद्रकेतु की मौत भी इसी तरह मेरे ही हाथों में होगी, या फिर मगरमच्छ के मुँह में उसकी मौत निश्चित है। 'जय कालकेय की।"

इस बीच वज्रमुष्टि के साथ गये दो अनुचर नदी के किनारे आ पहुँचे और वज्रमुष्टि की ओर देखते हुए हाथों से कोई इशारा किया। वज्रमुष्टि ने सोचा कि देरी करने से खतरे का सामना करना होगा; इस ख्याल से वह डोंगी पर सवार हो नदी के इस पार आ गया।

अकेले वज्रमुष्टि के हाथों इतने सारे समुद्री डाकुओं का वध देख उसके शौर्य और पराक्रम पर वे दोनों अनुचर अचरज में आ गये और उसकी बड़ी तारीफ़ की। इसके बाद वे सब लोग शिवदत्त के पास लौट आये।

दूर से ही वज्रमुष्टि को लौटते देख शिवदत्त उसकी ओर बढ़ा और उत्सुकतापूर्वक पूछा–"क्या हुआ? हमारा कुछ काम बना? समुद्रकेतु के अनुचर उस प्रदेश में तो नहीं हैं न?"

वज्रमुष्टि उस घटना का समाचार सुनाने को संकोच करने लगा। इस बीच उसके साथ गये दो अनुचरोंने शिवदत्त को वज्रमुष्टि के साहसिक कार्य का परिचय दिया। शिवदत्त और मंदरदेव वज्रमुष्टि के साहस का वृत्तांत सुनकर विस्मय में आ गये।

शिवदत्त ने वज्रमुष्टि की तारीफ़ करते हुए कहा–"वज्रमुष्टि, तुम्हारी हिम्मत सचमुच प्रशंसनीय है। समय आने पर तुम्हारी इच्छा के मुताबिक़ समुद्रकेतु का वध करने का काम तुम को ही सौंप दूंगा।"

समुद्रकेतु का नाम सुनते ही देवमाया गुस्से में आ गई और कांपते हुए स्वर में बोली–"महाशय, वज्रमुष्टि के हाथों पहले समुद्रकेतु के पहरेदारों का वध होगा। इसलिए अब हम सबकी आँख बचा कर उसके निवास तक पहुँच सकते हैं। यहाँ से चार-पाँच कोस की दूरी पर उसका निवास है। वहाँ तक हम लोग नावों पर ही पहुँच सकते हैं।"

"समुद्रकेतु का निवास कैसा है? कोई क़िला जैसा तो नहीं होगा न?" शिवदत्त ने

पूछा। "वहाँ पर क़िले जैसी कोई इमारत नहीं है। वह सारा प्रदेश समुद्र के पानी से घिरा हुआ है। पर जहाँ-तहाँ छोटे-छोटे टापू हैं। समुद्रकेतु ऐसे ही एकाध टापू में घर बनाकर निवास करता है। हाँ, उसके छिपने के लिए उधर काफी संख्या में पहाड़ी गुफाएँ भी हैं। उसकी रक्षा के लिए उसके चारों तरफ़ खारे जलवाली नदी मात्र है।" देवमायी ने समझाया।

"क्या उसके बहुत से अनुचर हैं?" शिवदत्त ने पूछा।

"अनुचरों की तादाद तो काफ़ी है। लेकिन इससे कहीं ज्यादा उसके गुलाम और शत्रु भी वहाँ पर हैं। मैं काफ़ी दिनों तक उसकी गुलाम के रूप में बंदिनी थी। अगर हम वहाँ पर घुसकर वहाँ के चौपालों में रहनेवाले बन्दी बने गुलामों को मुक्त कर दें तो वे ही लोग हमारी मदद के बिना ही समुद्रकेतु और उसके अनुचरों का खात्मा कर सकते हैं।" देवमायी ने आवेश में आकर कहा।

"गुलामों की संख्या लगभग कितनी होगी?" शिवदत्त ने पूछा।

"क़रीब पाँच-छह सौ लोग होंगे। इससे कम किसी भी हालत में नहीं।" देवमायी ने कहा।

"तो फिर हम लोग अभी रवाना हो जायें। वज्रमुष्टि के द्वारा लाई गई डोंगियों में हम लोग समुद्रकेतु की गुफा तक पहुँच सकते हैं। अंधेरा फैलने वाला है, दुश्मन को बेखबर देख उसका सामना करने के लिए यही एक अच्छा मौक़ा है।" शिवदत्त बोला।

अब थोड़ी देर भी विलंब किये बिना सब लोग खारे जलवाली नदी की ओर चल पड़े। वे लोग जल्दी ही एक ऐसे टीले पर पहुँचे जो चारों तरफ़ से पानी से घिरा हुआ था। उस प्रदेश में जहाँ-तहाँ हरे-भरे पेड़ फैले हुए थे। उस नदी के किनारे समुद्री डाकुओं की डोंगियाँ

पेड़ों से बँधी हुई थीं। उन डोंगियों पर सवार हो शिवदत्त के अनुचर देवमायी के मार्गदर्शन में आगे बढ़े।

तब तक चारों ओर घना अंधेरा छा गया था। दूज का चांद बादलों की ओट में आँख मिचौनी खेल रहा था। दूर पर समुद्रकेतु के निवास वाला टीला था, मशालों की टिमटिमाती रोशनी दिखाई दे रही थी। पर चारों तरफ़ एक दम डरावना और भयंकर सन्नाटा छाया हुआ था।

उस गहरे अंधकार में डोंगियाँ एक दूसरे से टकरा न जायें, इस वास्ते वे लोग एक दूसरे को सावधान करते हुए आगे बढ़ने लगे। रास्ते में जहाँ-तहाँ टीलों पर उगे पेड़ों पर जलपक्षी कर्कश ध्वनि कर रहे थे। पानी में निवास करनेवाले क्रूर जल-जंतु और मगरमच्छ खाने की खोज में इधर-उधर चक्कर लगाते हुए डोंगियों के पास पहुँच जाते और उन पर मनुष्यों को सवार हुए देख भयभीत हो हमला किये बिना ही दूर हट जाते थे।

आधी रात गये शिवदत्त अपने अनुचरों के साथ समुद्रकेतु के निवासवाले टीले तक पहुंचा। अब उनके सामने पहला कर्तव्य यह था कि टीले पर बसे गाँवों के चौपालों में जानवरों की तरह बन्दी बनाये गये गुलामों को मुक्त करना और उनकी मदद लेकर समुद्रकेतु और उसके अनुचरों का अंत करना। इसी बात पर वह गहरई से विचार करने लगा।

शिवदत्त अपने मन में इस प्रकार योजना बना ही रहा था कि तब तक वह उस प्रदेश में पहुँच गया। सब लोग चुपचाप डोंगियों से उतर कर किनारे पहुँचे। फिर चौकन्ने हो बड़ी सावधानी के साथ वे लोग पेड़ की ओट में लुकते-छिपते थोड़ी दूर आगे बढ़े। उनके सामने अचानक ऐसा प्रदेश आया जो सैंकड़ों मशालों की रोशनी से जगमगाता हुआ दिन की याद दिलाता था।

शिवदत्त झट घने पेड़ों की ओट में चला गया, जहाँ मशालों की रोशनी नहीं पहुँच रही थी। तब उसने इशारे से अपने अनुचरों को निकट बुलाया।

सबने पेड़ों की आड़ से मशालों की रोशनी की ओर देखा। वहाँ दर लगभग चालीस-पचास बलिष्ठ और आयुधधारी समुद्री डाकू नज़र आये, जिनमें से कुछ खड़े हुए थे, बाक़ी बैठे हुए थे। समुद्रकेतु शराब पीता हुआ चार-पांच कवचधारी व्यक्तियों के साथ कोई गुप्त मंत्रणा कर रहा था।

देवमायी उन कवचधारियों की ओर इशारा करते हुए बोली–"वे चारों आदमी मकर मण्डल के राजा हरिशिख के सैनिक हैं। सवेरा होने पर मकर देवता के आहार के वास्ते वे लोग यहाँ पर आये हुए हैं। वे लोग समुद्रकेतु के द्वारा बँदी बनाये गये जवान और स्वस्थ लोगों को अधिक से अधिक मूल्य चुका कर अपने साथ राजा के पास ले जाने के लिए आये हुए हैं। उन्हें ये लोग मकरमण्डल में ले जायेंगे।"

शिवदत्त उसकी बातें सुन विस्मय में आया और बोला–"मकर देवता के आहार के लिए क्या मानवों को छोड़ जानवर काम नहीं आ सकते? वह देवता भले ही क्यों न हो, आखिर वह मगरमच्छ जो ठहरा।"

"मकर मण्डल के निवासी उसे देवता मानते हैं। शायद क्षुद्र देवता मानते हों! उसे देख कर लोग डरते भी बहुत हैं। उसे जानवरों की बलि चढ़ाना पाप मानते हैं। इसीलिए मनुष्यों की बलि चढ़ाई जाती है!" देवमायी बोली।

"अगर उन मूर्ख लोगों का विश्वास सच हो, तो उस क्षुद्र देवता के लिए काल स्वरूप वीर हमारे साथ हैं।" यों शिवदत्त वज्रमुष्टि की ओर हाथ हिलाते हँस पड़ा।

"मैं सिर्फ़ उस मकर देवता के लिए ही नहीं बल्कि उस क्रूर समुद्रकेतु के लिए भी काल स्वरूप हूँ।" वज्रमुष्टि क्रोध में आकर दांत भींचते हुए बोला।

"अच्छी बात है। अब हमें चुपचाप जाकर उन बंदी बने गुलामों को जहाँ तक हो सके, जल्दी छुड़ाना होगा। यदि हम इस कोशिश में कामयाब न हो सकें तो यहाँ से हम उन्हीं डोंगियों में भाग निकलेंगे, जिन पर बैठकर हम यहाँ आए थे।" शिवदत्त बोला।

अब देरी किये बिना देवमायी बंदी गुलामों की ओर चल पड़ी। सब लोग पेड़ों के पीछे छिपते हुए उसके पीछे पीछे आगे बढ़े। थोड़ी देर में एक स्थान पर पहुँचे जो देखने में मवेशीखाना सा लगता था। उसमें बहुत से लोग जानवरों की तरह खूंटों से बंधे पड़े थे। उनके हाथ-पैरों में हथकड़ियाँ और बेड़ियां पड़ी थीं।

शिवदत्त ने अपने अनुचरों को चेतवानी देकर शाला में प्रवेश किया। वज्रमुष्टि उन गुलामों के पास पहुँचा। हर एक दास को अपने आने का कारण बताया और उन्हें चुपचाप रहने की चेतावनां दी।

सब से पहले शिवदत्त और उनके अनुचरों ने कुछ गुलामों के बंधन अपने हथियारों से काट डाले। इस तरह बंधन मुक्त हुए गुलामों ने अपने साथियों के बंधन तोड़ डाले।

इस प्रकार थोड़ी ही देर में चारों ओर के चौपालों में बंधे सभी बंदी मुक्त हो गए।

'स्वयंप्रभा कहाँ है?' यह सवाल देवमायी और मंदरदेव को पहले से ही खुरेद रहा था। उन दोनों ने कई गुलामों से इसके बारे में पूछा भी, पर कोई भी उसके बारे में सही जानकारी न दे पाये। क्या स्वयंप्रभा को अब तक मकर देवता का

आहार तो नहीं बना दिया गया है? इस विचार से वे दुखी हुए। इतने में एक गुलाम आगे आकर बोला–"हुजूर, थोड़ी देर पहले मैंने पहरेदारों की बातचीत सुनी। वे आपस में कानाफूसी कर रहे थे कि एक सुंदर कन्या को समुद्रकेतु किसी के हाथ बड़ी मोटी रक़म लेकर बेचने जा रहा है।"

यह खबर सुनने पर देवमायी के साथ सबके चेहरे खिल उठे। लेकिन मंदरदेव ने शिवदत्त के निकट जाकर पूछा–"शिवदत्त, यहाँ पर इतने सारे गुलाम भरे पड़े हैं न? क्या यह अचरज की बात नहीं है कि इन पर पहरा देने के लिए कोई दहरेदार तक नहीं है?"

शिवदत्त मुस्कुरा कर बोला–"इस समुद्र के बीच हाथ-पैर बंधे पड़े ये लोग कहाँ जा सकते हैं? फिलहाल हम अपने कर्तव्य के बारे में सोचें। मेरे विचार से स्वयंप्रभा इसी प्रदेश में कहीं न कहीं जरूर होगी। हम लोग एक साथ समुद्रकेतु पर धावा बोल देंगे और उसका सर्वनाश कर डालेंगे।"

इस बीच वज्रमुष्टि ने सारे गुलामों को एक जगह इकट्ठा किया। उनके हाथ लाठियाँ और लोहे की छड़ियाँ दे दीं। समुद्रकेतु पर हमला करने के लिए आवश्यक सारी तैयारियाँ उसने पूरी कीं। शिवदत्त के आदेश पर वे लोग तीन हिस्सों में बाँट दिये गये। यह निर्णय हुआ कि शिवदत्त, मंदरदेव और वज्रमुष्टि उन तीनों टुकड़ियों के आगे रहकर हमला करेंगे।

इसके बाद सब लोग पेड़ों के पीछे अंधेरे में चुपचाप चलकर आगे बढ़े और उन्होंने एक साथ गर्जन करते हुए तीन ओर से समुद्रकेतु पर चढ़ाई कर दी।

समुद्रकेतु ठीक से यह समझ नहीं पाया कि इस तरह अचानक उसके दल पर हमला करनेवाले दुश्मन कौन हैं? इस बीच उसके दल के बहुत सारे लोग शिवदत्त के अनुचरों के हाथों बुरी तरह मारे गये।

(अगले अंक में समाप्त)

विश्वासपात्र नौकर

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। इस पर शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मेरे मन में यह शंका पैदा हो रही है कि आप जो श्रम उठा रहे हैं, इसका कारण आपकी जन्मकुंडली का प्रभाव है, या क़िस्मत की करामात है? कुछ लोग बलवान लोगों के हाथों में पड़कर लाचार हो गुलामी की ज़िंदगी बिताते हैं, कुछ लोग ऐसी बदक़िस्मती से दूर रह कर भी जन्मजात गुलामों की तरह व्यवहार करते हैं। इस दूसरी कोटि के व्यक्तियों में हनुमान शर्मा की एक विचित्र कहानी सुनाता हूँ; श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: कांचीपुर का निवासी धनगुप्त सारे नगर के व्यापारियों मे संपन्न था। उसके दादा, परदादा

वेताल कथाएँ

और पिता ने तो अपार संपत्ति कमाई ही थी, धनगुप्त भी दूसरे राज्यों के साथ व्यापार करके लाखों रुपये कमाया करता था।

भारी संपति के होते हुए भी धनगुप्त को मानसिक शांति बिलकुल न थी। उसकी उम्र बढ़ती जा रही थी, बुढ़ापा निकट आ रहा था, लेकिन उसके कोई संतान न हुई। यही चिंता उसकी पत्नी कनक महालक्ष्मी को भी सताने लगी।

इस हालत में कनक महालक्ष्मी को एक उपाय सूझा। उसने एक दिन रात को खाना परोसते वक्त यह उपाय अपने पति को बताया।

धनगुप्त ने चकित होकर अपनी पत्नी को समझाया—"तुम तो निरी बुद्धू मालूम होती हो। जान-बूझ कर तुम सौत को मोल लेना चाहती हो? यह बात सही है कि तुम्हारी मौसेरी बहन राजेश्वरी सब तरह से योग्य कन्या है, मगर उसकी उम्र तुम्हारी उम्र से आधी भी नहीं है। यह शादी किसी भी दृष्टि से देखा जाय, उचित नहीं है।"

धनगुप्त के कई रिश्तेदार उसे अपने पुत्र दत्त देने के लिए तैयार थे, लेकिन धनगुप्त और कनक महालक्ष्मी को किसी को भी दत्तक पुत्र बनाना पसंद न था। दत्तक पुत्र दत्तक ही होता है, वह कभी निजी पुत्र नहीं हो सकता है न।

धनगुप्त ने कनक महालक्ष्मी की सलाह का तिरस्कार किया था, इसलिए वह उस दिन से पहले से कहीं ज्यादा चिंतित रहने लगी। कुछ दिन बाद इसी चिंता में घुल-घुल कर मर गई। पत्नी की मृत्यु से धनगुप्त के अन्दर भारी परिवर्तन आ गया।

धनगुप्त ने कनक महालक्ष्मी की सलाह को नहीं माना था, इस से वह बड़ा दुखी हुआ और आखिर उसने राजेश्वरी के साथ विवाह करने का निश्चय किया।

एकदम सादे ढंग से धनगुप्त का विवाह राजेश्वरी के साथ संपन्न हुआ। राजेश्वरी ससुराल आ गई और साल भर के अंदर

उसने एक सुंदर बालक को जन्म दिया। धनगुप्त की कामना भी पूरी हो गई। धनगुप्त ने उस बालक का नाम लक्ष्मीप्रसन्न रखा। बड़े ही लाड़-प्यार से बालक का पालन-पोषण करने लगा।

लक्ष्मीप्रसन्न जब बारह साल का हुआ तब तक धनगुप्त सत्तर साल का बूढ़ा हो चुका था। अब उसके दिल को दूसरी चिंता खुरेदने लगी। वह यह कि उसकी मृत्यु के बाद अपार संपत्ति की रक्षा करना मामूली बात नहीं है। तिस पर औरतों के द्वारा यह संभव नहीं। राजेश्वरी की उम्र भी कोई ज्यादा नहीं है। वह दुनियादारी का अनुभव भी नहीं रखती।

इस समस्या को सुलझाने का उपाय ढूंढ़ने में धनगुप्त परेशान था कि उसे एक दिन अचानक एक बढ़िया उपाय सूझ ही गया।

व्यापार में लगी हुई पूंजी और अचल संपत्ति के अलावा हीरे-जवाहरात तथा सोना उसके घर की तिजोरियों में भरा पड़ा था। बालक लक्ष्मीप्रसन्न के बड़े होने तक उस संपत्ति की रक्षा करने के लिए एक विश्वासपात्र व्यक्ति की जरूरत थी। इस काम के लिए सब से ज्यादा योग्य व्यक्ति विनायक ही हो सकता था।

विनायक धनगुप्त के नौकरों में से एक था। विनायक के मां-बाप उसके बचपन में ही मर गये थे। धनगुप्त ने उसे आश्रय देकर पाला-पोसा था। परिवार के बीच और दूकान में भी विनायक धनगुप्त का विश्वासपात्र बना हुआ था। उसके मन में अपने मालिक के प्रति बड़ी श्रद्धा और भक्ति थी। व्यापार के काम से धनगुप्त जब दूसरे राज्यों में गया था, तब दो-तीन बार विनायक ने अपनी जान जोखिम में डाल कर धनगुप्त के प्राण बचाये थे।

एक दिन रात को धनगुप्त ने विनायक को अपने कमरे में ले जाकर समझाया—"अरे विनायक, तुम जानते हो कि तुम्हारे प्रति मेरे मन में कैसा गहरा विश्वास है। मैं तुम्हें एक खास जिम्मेदारी सौंपने जा रहा

हूँ। इसके बदले में तुम्हें मुझे वचन देना होगा कि तुम विश्वास के साथ यह जिम्मेदारी निभाओगे।"

"मालिक, मैंने कब आप की बात का इनकार किया है? मैं आपके चरण छूकर क़सम खाऊँगा और आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।" विनायक ने हामी भर दी।

"मेरे पैर छूकर नहीं, दीवार पर लटकने वाले श्रीरामचन्द्र के चित्र को अपने सर पर रख कर क़सम खा लो, तभी मैं संतुष्ट हो सकता हूँ।" धनगुप्त ने अपने मन की बात कही।

विनायक ने धनगुप्त की आज्ञा का पालन किया। इस पर धनगुप्त बोला—"विनायक, मैं अब ज्यादा दिन ज़िंदा नहीं रह सकता। उम्र के बढ़ने के साथ मुझे अपने पुत्र लक्ष्मीप्रसन्न की चिंता खाये जा रही है। मुझे इस बात का डर है कि दादा-परदादाओं के जमाने से चली आने वाली यह संपत्ति कहीं मेरे वंश से निकल न जाय। हमारी इस संपत्ति को बचा सकने वाले तुम अकेले ही हो। तुम मुझे वचन दो, तो मैं निश्चित अपनी देह त्याग सकता हूँ।"

इसके बाद धनगुप्त ने विनायक को सारी बातें समझाईं। इसके बाद भी वह छह महीने तक ज़िंदा रहा। धनगुप्त के मरने पर विनायक उसकी संपत्ति की रक्षा बड़ी सावधानी के साथ करने लगा। मालिक के अभाव में भी उसका व्यापार पहले की तरह सुचारू रूप से चलने लगा।

मगर धन कुबेर जैसे धनगुप्त की संपत्ति का विनायक जैसे एक नौकर का संरक्षक बनना कई लोगों के दिल में आश्चर्य के साथ संदेह का भी कारण बना। उन लोगों ने सोचा कि उचित सावधानी न बरतने पर लक्ष्मीप्रसन्न और उसकी माँ के प्रति विनायक दगा कर सकता है। इस बारे में कुछ लोगों ने राजेश्वरी को भी सचेत किया।

दूसरों की शिकायतों का असर यह हुआ कि राजेश्वरी के मन में विनायक के प्रति

संदेह बढ़ता गया। एक दिन उसने विनायक से पूछा–"विनायक, लक्ष्मीप्रसन्न अब जवान होने को है और वह अपने पैरों पर आप खड़े हो जाने की ताक़त भी रखता है। उसके पिता ने मुझसे बताया था कि उन्होंने सारी संपत्ति तुम्हारी देखरेख में छोड़ रखी है, मगर मुझे यह नहीं बताया कि वह सारी संपत्ति कहाँ और किस रूप में है।"

"मालिकिनजी, मालिक ने मुझे आदेश दिया है कि लक्ष्मीप्रसन्न के बालिग होने पर सारी संपत्ति मैं उनके हाथ सौंप दूं। एकाध महीने के अन्दर छोटे मालिक बीस साल की उम्र पूरी करने जा रहे हैं। आप कृपया थोड़े दिन और सब्र कीजिए।" विनायक ने समझाया।

आखिर वह दिन भी आ पहुँचा। विनायक दो मजबूत घोड़ों से जुती गाड़ी में लक्ष्मीप्रसन्न को बिठा कर गाँव के बाहर के जंगल में पहुँचा। एक ऊँचे टीले के पास गाड़ी रोककर वे दोनों टीले पर चढ़ गये और फिर नीचे की एक घाटी में उतर गये। वहाँ पर दो चट्टानों के बीच की खाली जगह में जाकर खड़े होते ही विनायक अपने बाल नोचते हुए लक्ष्मीप्रसन्न की ओर पागल की तरह नज़र दौड़ाने लगा।

इसे देख लक्ष्मीप्रसन्न डर गया और उसने विनायक से पूछा–"विनायक, यह तुम्हें क्या हो गया है? हम दोनों तो यहाँ पर पिताजी के द्वारा गाड़ी गयी संपत्ति खोद ले जाने के लिए आये हैं न?"

"पिताजी के द्वारा गाड़ी गई संपत्ति कहाँ है? दर असल तुम कौन हो?" विनायक ने अपनी आँखें लाल-पीली करके पूछा।

लक्ष्मीप्रसन्न विनायक की वह भयंकर आकृति देख और डर गया, और घर लौट कर उसने सारा समाचार अपनी माँ को सुनाया।

लक्ष्मीप्रसन्न के मुँह से यह वृत्तांत सुनकर राजेश्वरी अचरज में आ गई। इस बीच विनायक वहाँ पर इस तरह पहुंचा, मानो कुछ हुआ ही न हो, और वह राजेश्वरी के सामने चुपचाप खड़ा हो गया।

राजेश्वरी ने विनायक को अपने बेटे की बताई हुई बातें सुनाईं। तब विनायक भौंहें चढ़ाकर बोला—"ओह, ऐसी बात है? मगर ये सारी बातें मुझे बिलकुल याद तक नहीं हैं।"

यह जवाब सुनने पर राजेश्वरी के मन में यह विश्वास जम गया कि विनायक उन्हें दगा देकर अपने मालिक के द्वारा छिपाई गई सारी संपत्ति हड़पने की सोच रहा है।

दूसरे दिन राजेश्वरी अपने पुत्र को साथ लेकर विनायक के पीछे चल पड़ी। इस बार पहाड़ी घाटी की चट्टानों के बीच पहुँचते ही विनायक क्रोध में आकर हंगामा मचाने लगा।

विनायक के रौद्र रूप को देख कर राजेश्वरी भी डर गई, मगर इससे ज़्यादा दुःख उसे इस बात का हुआ कि उसकी सारी संपत्ति हाथ से निकल जायेगी। तीसरे दिन वह गाँव के कुछ बुजुर्गों को साथ लेकर विनायक के पीछे पहाड़ी घाटी में पहुँची। इस बार विनायक उस खाली प्रदेश में पहुँचते ही सबको विनयपूर्वक प्रणाम करके कुदाल लेकर उस जगह पर खोदने लगा। थोड़ी गहराई तक खोदने पर कई तांबे के बर्तन निकल आये। उन में हीरे, जवाहरात, रत्न और सोने के टुकडे भरे पड़े थे।

उस संपत्ति को देख कर राजेश्वरी और लक्ष्मीप्रसन्न की खुशी का ठिकाना न रहा। पर उनके साथ जो बुजुर्ग गये हुए थे,

उनकी समझ में यह बात न आई कि इसके पहले विनायक ने ऐसा व्यवहार क्यों किया।

बेताल ने यह कहानी सुना कर पूछा– "राजन, विनायक के बारे में आप का क्या विचार है? उसके बारे में राजेश्वरी के साथ बुजुर्गों ने भी यही सोचा था कि वह धनगुप्त के परिवार को धोखा देगा। यह हालत जानकर भी विनायक ने दो बार विचित्र व्यवहार करके तीसरी बार धनगुप्त की सारी संपत्ति राजेश्वरी के हाथ क्यों सौंप दी? क्या उस संपत्ति को हड़पने की हिम्मत उसके अन्दर न थी? क्या आत्मविश्वास खो दिया था या उसको आश्रय देने वाले परिवार के प्रति उसके मन में पुरानी गुलामी की प्रवृत्ति जाग गई थी? इस शंका का समाधान जानकर भी न देंगे तो आप का सर फट कर टुकड़े टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "विनायक के अन्दर तुम जो दोष ढूंढते हो, वे बिलकुल नहीं हैं। अपने को आश्रय देकर पालने वाले परिवार के प्रति श्रद्धा-भक्ति का होना गुलामी की प्रवृत्ति नहीं कहलायेगी। धनगुप्त की दूसरी पत्नी और पुत्र भी विनायक की ईमामदारी व सच्चाई को समझ न पाये थे। राजेश्वरी ने विनायक से पूछा भी था कि उसने धन कहाँ पर छिपा रखा है? इसका मतलब है कि राजेश्वरी के मन में विनायक के प्रति यह संदेह पैदा हो गया था कि उसके पति की संपत्ति को विनायक ने हड़प लिया होगा। यह बात विनायक ने भांप ली। वे लोग कभी-न-कभी उस पर यह दोषारोप भी कर सकते थे कि उसने अपने मालिक का धन चुरा लिया है। इसी ख्याल से विनायक ने दो बार पागल जैसा व्यवहार किया और तीसरी बार बुजुर्गों के सामने अपने मालिक के द्वारा गाड़ी गई संपत्ति को खोद कर बाहर निकाला।"

राजा के इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

कल की चिंता!

जोगेश एक लकड़हारा था। एक दिन वह जंगल में लकड़ी काटते-काटते थक गया और हांफते हुए खड़ा रहा। इस बीच उस रास्ते से गुजरने वाले एक सन्यासी जोगेश को देख रुक गया और पूछा–"सुनो, तुम ने इतनी सारी लकड़ियां क्यों काटीं? और यों हांफते क्यों हो? थोड़ी-सी लकड़ियाँ काट लेते तो तुम्हें आज का खाना मिल जाता? तुम हद से ज्यादा मेहनत मत किया करो।"

जोगेश हांफते हुए बोला–" आज मैंने जो लकड़ियाँ काटीं, इनसे मुझे तीन दिन का खाना मिल जाएगा। मैं कल से तीन दिन तक जंगल में आये बिना आराम कर सकता हूँ।"

सन्यासी ने सहनुभूति पूर्ण नजर दौड़ा कर कहा–"भाई, यह कोई नहीं जानता कि दूसरे क्षण में इस शरीर का क्या होगा? ऐसी हालत में कल के वास्ते तुम चिंता क्यों करते हो?"

जोगेश खीझकर बोला–"अगर मैं कल तक जिंदा न रहा, तो मेरे सामने कोई सवाल ही नहीं रहेगा। यदि जिंदा रहा तो जंगल में आने की मेहनत से बच जाऊँगा। मेरी बात सही है न?"

सन्यासी पल भर केलिए चकित रहा, फिर मन ही मन गुनगुनाते वापस चला गया–"ओह, ऐसी दुनियादारी की अक्ल और तर्क-बुद्धि मेरे गुरु भी नही रखते!"

समझदार बेटे

उज्बेकिस्तान में एक गरीब आदमी था। उसके तीन बेटे थे। पिता ने एक दिन अपने बेटों को बुला कर समझाया– "मेरे प्यारे बेटो, हमारे घर में न सोना है और न चांदी। न गायें हैं और न भैंसें। इसलिए तुम लोग ज्ञान रूपी धन कमाओ। उसी धन से अपनी ज़िंदगी बसर करो।"

बाप की बातें बेटों के मन में घर कर गईं। वे ज्ञान रूपी धन कमाने में लग गये। हर छोटी-सी बात को वे अच्छी तरह से समझने की कोशिश करते। इस तरह कई साल बीत गये। इस बीच वे लोग जवान बन गये। उनका बाप भी मर गया। वे लोग अपने गाँव को छोड़ जीविका की खोज में चल पड़े।

कई दिन की यात्रा के बाद उन्हें एक शहर दिखाई पड़ा। वे यह सोच कर शहर की ओर चल पड़े कि शायद वहाँ पर कोई न कोई नौकरी मिल जाय।

बड़ा भाई सर झुकाये रास्ते की ओर देखते चला जा रहा था। वह एक जगह अचानक रुक कर बोला–" थोड़ी देर पहले इस रास्ते से एक बहुत बड़ा ऊँट चला गया है!"

इसके बाद तीनों भाई फिर आगे बढ़े। इस बीच मंझला भाई बोला–"वह ऊँट काना है, उसे एक ही आंख से दिखाई देता है!"

कुछ दूर और आगे जाने पर छोटे भाई ने कहा–" उस ऊँट पर एक औरत और एक बच्चा सवार थे!"

तीनों भाई यों बातचीत करते चले जा रहे थे। इतने में उनके पीछे से एक घुड़सवार आ पहुँचा। बड़े भाई ने घुड़सवार से पूछा–" महाशय, लगता है कि आप किसी चीज़ की खोज कर रहे हैं। ऊँट की खोज तो नहीं कर रहे हैं?"

अरब की कहानियाँ

"हाँ, हाँ! मेरा ऊँट कहीं खो गया है!" घुड़सवार ने जवाब दिया।

"वह एक बहुत बड़ा ऊँट है न?" बड़े भाई ने फिर पूछा।

"हाँ, हाँ! क्या तुम लोगों ने उसे कहीं देखा है?" घुड़सवार ने फिर पूछा।

"वह एक आँख से काना है न?" दूसरा भाई बोला।

"उस पर एक औरत और एक बच्चा सवार थे न?" छोटा भाई बोला।

"हाँ! तुम्हारा कहना सच है। इसका मतलब है कि तुम लोगों ने उसे देखा है! बताओ, कहाँ है?" घुड़सवार ने पूछा।

"हमने आपके ऊँट को देखा नहीं है!" तीनों भाई एक स्वर में बोल उठे।

घुड़सवार को उन पर शक हुआ। उसने धमकी दी–"बताओ, तुम लोगों ने मेरे ऊँट और उस पर सवार मेरी औरत और बच्चे का क्या किया? वरना तुम्हें पकड़ कर मैं बादशाह के पास ले जाऊँगा।"

"हमने सचमुच आप के ऊँट, आप की बीबी और बच्चे को देखा नहीं है, लेकिन आप अमुक दिशा में जायेंगे तो शायद आप को ऊँट मिल जाय।" तीनों भाई बोले।

"जिस ऊँट को तुम लोगों ने नहीं देखा, उसका हुलिया कैसे बता सकते हो? चलो, बादशाह के पास!" यों कहकर घुड़सवार उन तीनों भाइयों को बादशाह के पास ले गया और फ़रियाद की कि इन लोगों ने उसके ऊँट, बीबी और बच्चे को चुराया है।

बादशाह ने पूछा–"इसका सबूत क्या है?"

"जहाँपनाह, इन लोगों ने खुद बताया है कि मेरा ऊँट बड़ा है, उसको एक आँख दिखाई नहीं देता और उसके ऊपर एक औरत और एक बच्चा सवार हैं! अगर इन लोगों ने नहीं देखा है तो ये सारी बातें सच कैसे बता सकते हैं?" घुड़सवार ने उत्तर दिया।

नवकोटि नारायण

किसी जमाने में ब्रह्मदत्त काशी पर राज्य करते थे। उनके शासन-काल में काशी में एक बड़ा धनी रहता था। उसने नौ करोड़ रुपये कमाये। इसलिए, इस बीच जब उसके एक पुत्र पैदा हुआ तो अमीर ने उसका नामकरण नवकोटि नारायण किया।

अमीर आदमी अपने बेटे नारायण की हर इच्छा की पूर्ति करता था। इसका नतीजा यह हुआ कि बालक नारायण नटखट और उद्दण्ड हो चला। नारायण जब जवान हुआ, तब अमीर ने एक सुंदर कन्या के साथ उसकी शादी कर दी। लेकिन इसके थोड़े ही दिन बाद अमीर का देहांत हो गया।

बचपन से नारायण पानी की तरह धन खर्च करता गया। आखिर उसकें पिता की मौत के समय तक सारी संपति स्वाहा हो गई। उल्टे क़र्ज का बोझ उसके सर पर आ पड़ा। कर्जदारों ने आकर क़र्ज चुकाने के लिए उस पर दबाव डालना शुरू किया। उस हालत में नारायण को अपनी ज़िंदगी के प्रति विरक्ति पैदा हो गई। उसने सोचा कि इस अपमान को सहने के बदले कहीं मर जाना अच्छा है! आखिर उन से बचने के ख्याल से बोला—"महाशयो, मैं गंगा के किनारे अमुक पीपल के पेड़ के पास जा रहा हूँ। वहाँ पर मेरे पुरखों द्वारा गाड़ा हुआ खजाना है! आप लोग ऋण-पत्र लेकर कृपया वहाँ पर आ जाइयेगा।"

क़र्जदार नारायण की बातों पर यक़ीन करके गंगा के किनारे पहुँचे। नारायण ने खजाने को ढूँढ़ने का अभिनय किया। क़रीब आधी रात तक इधर-उधर खोजता रहा। आखिर कर्जदारों को बेखबर पाकर नारायण "जय परमेश्वर की" चिल्ला कर गंगा में कूद पड़ा। गंगा की धारा उसे दूर बहा ले गई।

"बेटा, तुम डरो मत, मेरे साथ चलो।" यों उसे हिम्मत बँधा कर हिरन ने नारायण को अपनी पीठ पर बिठाया और उसको अपने निवास तक ले गया। नारायण के होश संभालने तक हिरन जंगल से फल ले आया और उसकी भूख मिटाई।

एक दिन हिरन ने नारायण को समझाया—"बेटा, मैं तुम्हें जंगल पार कराकर तुम्हारे राज्य का रास्ता बता देता हूँ। तुम अपने गाँव चले जाओ। लेकिन मेरी एक शर्त है—राजा या कोई और व्यक्ति भले ही तुम पर दबाव डाले, या लोभ दिखावे, तुम यह प्रकट न करना कि अमुक जगह सोने का हिरन है।

नारायण ने हिरन की बात मान ली। उसकी बातों पर विश्वास करके हिरन ने नारायण को अपनी पीठ पर बिठाया, और जंगल पार करा कर उसे काशी जाने वाले रास्ते पर छोड़ दिया।

नारायण जिस दिन काशी नगर में पहुँचा, उस दिन वहाँ पर एक अद्भुत घटना हुई। वह यह कि रानी को सपने में एक सोने के हिरन ने दर्शन देकर उसे धर्मोपदेश किया था।

रानी ने राजा को अपने सपने का समाचार सुनाकर कहा—"अगर दुनिया में ऐसा हिरन न होता तो मुझे कैसे दिखाई देता? चाहे

उस जमाने में बोधिसत्व एक हिरन का जन्म धारण कर अन्य हिरनों से दूर गंगा के किनारे एक आम के बगीचे में रहने लगा था। उस हिरन की अपनी एक अनोखी विशेषता थी। उसकी देह सोने की कांति से चमक रही थी। लाख जैसे लाल खुर, चांदी के सींग, हीरों की कणियों से चमकने वाली आँखें, उसकी आकृति की विशेषताएँ थीं। आधी रात के वक़्त उस हिरन को एक मनुष्य की करुण पुकार सुनाई दी। हिरन यह सोचते हुए कि यह कैसा आर्तनाद है, नदी में कूदकर उस आवाज़ की दिशा में तैरते हुए नारायण के पास पहुँचा।

वह कहीं भी क्यों न हो, उसे पकड़ लाने पर मेरे प्राण बच सकते हैं, वरना नहीं ।"

रानी के वास्ते हिरन मंगवाने के लिए राजा ने एक उपाय किया । उन्होंने एक हाथी के हौदे पर एक सोने का बक्स रखवा दिया और उसमें एक हज़ार सोने के सिक्के भरवा दिये । तब निश्चय किया कि उसका जुलूस निकाला जाय और जो आदमी सब से पहले सोने के हिरन का समाचार देगा, उसको बक्स के भीतर के सोने के सिक्के उपहार के रूप में दिये जायेंगे । इस आशय का ढिंढोरा सब जगह पिटवाया गया । उस वक़्त नारायण काशी नगर में पहुँचा ।

उसने सेनापति के पास पहुँच कर निवेदन किया—"महाशय, मैं उस सोने के हिरन का सारा समाचार जानता हूँ । आप मुझे राजा के पास ले जाइये ।"

इसके बाद नारायण ने राजा और उनके परिवार को साथ ले हिरन का निवास दिखाया । वह थोड़ी दूर जा खड़ा हुआ ।

राजा के परिवार ने कोलाहल करना शुरू किया । हिरन के रूप में रहने वाले बोधिसत्व ने उनकी आवाज़ सुनी ।

"शायद कोई महान अतिथि आया होगा । उनका स्वागत करना चाहिए ।" यों सोचकर वह उठ खड़ा हुआ और सब लोगों से बचकर वह सीधे राजा के पास पहुँचने के लिए दौड़ा ।

हिरन की तेज गति को देख राजा आश्चर्य में आ गये । धनुष और बाण

लेकर हिरन पर निशाना लगाया। इस पर हिरन ने पूछा—"महाराज, रुक जाइये! आपको किसने मेरे निवास का पता बताया है?"

राजा के कानों में ये शब्द बड़े ही मधुर मालूम हुए। स्वतः ही उनके हाथों से धनुष और बाण नीचे गिर गये।

बोधिसत्व ने मीठे स्वर में फिर राजा से पूछा—"महाराज, आपको किसने मेरे निवास का पता बताया है?"

राजा ने नारायण की ओर उंगली का इशारा किया।

इस पर बोधिसत्व ने यों तत्वोपदेश किया—"शास्त्रों में वर्णित ये बातें बिलकुल सही हैं कि इस दुनिया में मनुष्य से बढ़कर कोई भी प्राणी कृतघ्न नहीं है। जानवर और चिड़ियों की भाषा भी समझी जा सकती है, लेकिन मनुष्य की बातों को समझना ब्रह्मा के लिए भी संभव नहीं है।" इन शब्दों के साथ बोधिसत्व ने वह सारा वृत्तांत राजा को सुनाया कि उसने नारायण की रक्षा करके कैसे उससे वचन लिया था। राजा ने क्रोध में आकर कहा—"ओह, यह बात है! ऐसे कृतघ्न दुनिया के लिए भी बोझीले हैं। यह महान पापी है। मैं अभी इसका वध करता हूँ।" यों कहकर राजा ने अपने तरकस से तीर निकाला।

बोधिसत्व ने राजा को रोकते हुए कहा—"महाराज, इसके प्राण न लीजियेगा। अगर यह ज़िंदा रहेगा तो कभी-न-कभी अपनी भूल समझकर यह अपनी ज़िंदगी को सुधार लेगा। आप कृपया अपने वचन के मुताबिक़ उसे जो पुरस्कार मिलना चाहिए, उसको दे दीजिएगा। यही बात न्याय संगत है।

राजा ने बोधिसत्व के उपदेश का पालन किया।

बोधिसत्व की उदारता, क्षमा आदि महान गुणों को राजा ने समझ लिया। उनको एक महात्मा मानकर अपने राज्य के सलाहकार के रूप में नियुक्त किया।
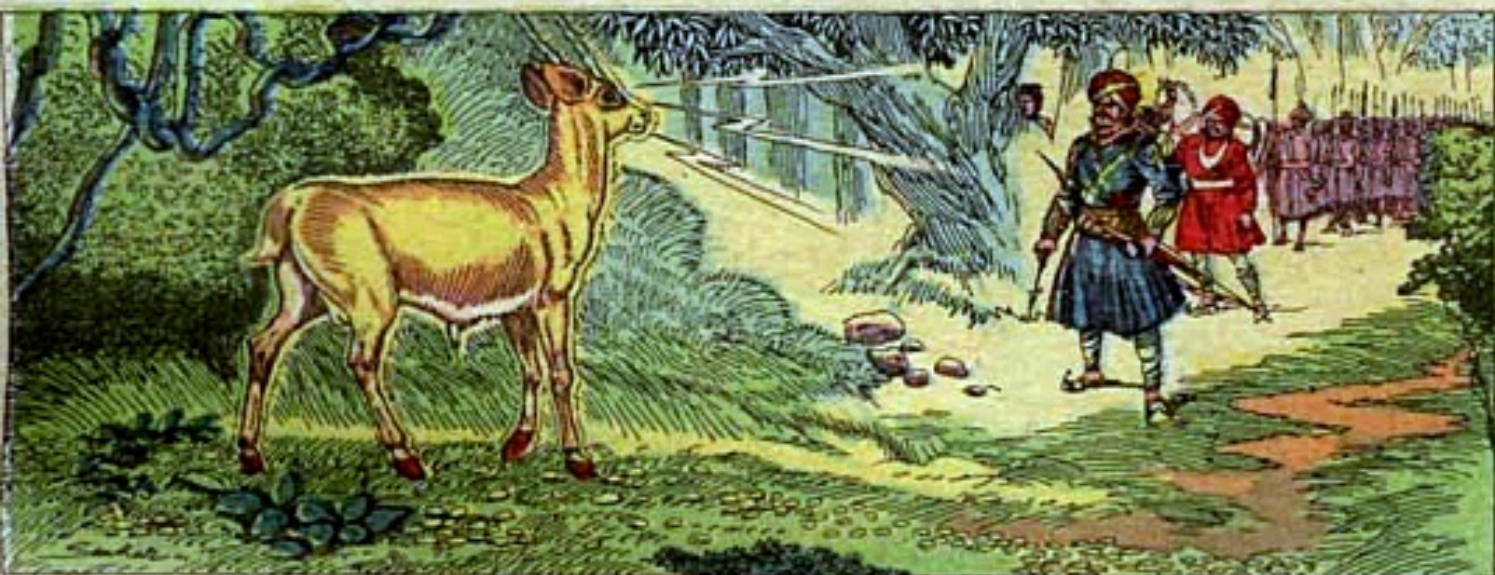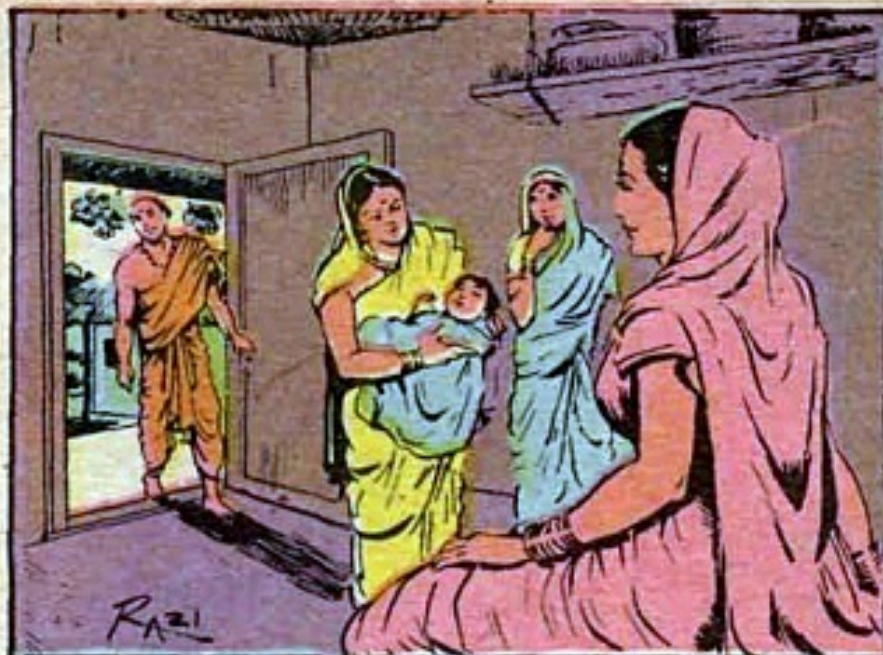
श्री चैतन्य महाप्रभु

उड़ीसा प्रांत के जयपूर से निकल कर श्रीमिश्र पंडित का परिवार बहुत समय पहले नवद्वीप की मायापुरी में आ बसा था। उस परिवार के प्रति आसपास के गाँव वाले बड़ा आदर भाव रखते थे। ई. सन् १४८६ १८ फ़रवरी को जगन्नाथ मिश्र और शचीदेवी दंपति के एक पुत्र हुआ।

माता-पिता ने बालक का "निमाई" नामकरण किया। उसकी देह प्रकाश से भरी थी, इसलिए लोग उसको "गौरांग" पुकारने लगे। निमाई शिक्षा-दीक्षा और खेल-कूदों में भी सभी बालकों में आगे था।

निमाई यौवनावस्था में ही एक संस्कृत पाठशाला स्थापित कर अध्यापक बना। उसके पांडित्य से विद्यार्थी बड़े ही प्रभावित थे। इसका कारण यह भी था कि निमाई अत्यंत दयालु थे। लेकिन एक दिन अचानक निमाई गया नगर में गये और ईश्वरपुरी नामक साधु के दर्शन करके उनके शिष्य बन गये।

निमाई ने मायापुरी को लौटने के बाद संस्कृत पाठशाला बंद कर दी। वे हमेशा ध्यान करने, श्री कृष्ण का कीर्तन-गान करने या उनकी भक्ति में लगे रहते थे। कुछ ही दिनों में कई लोग उनके अनुगामी बन गए। वे लोग दलों में बंट कर भजन-कीर्तन गाते हुए जुलूस भी निकालने लगे।

कुछ सनातनवादी लोगों को गीत गाने वाली नयी वैष्णव पद्धति पसंद न आई। इसलिए वे लोग बंगाल के नवाब के स्थानीय प्रतिनिधि काज़ी के पास पहुँचे और निमाई के अनुगामियों के द्वारा किये जाने वाले श्री कृष्ण संबंधी कीर्तनों के विरुद्ध शिकायत की।

काज़ी ने मार्गों पर वृंदगान करने पर रोक लगा दी। मगर इसकी परवाह किये बिना निमाई ने नवद्वीप के निवासियों को भजन में भाग लेने का आमंत्रण दिया। कुछ लोग डर गये और इसके द्वारा होने वाले दुष्परिणामों के प्रति उनका ध्यान आकृष्ट किया, मगर भगवान के प्रति अटल विश्वास के कारण निमाई ने काज़ी के आदेशों का उल्लंघन करने का निश्चय किया।

सैकड़ों भक्त निमाई के चारों तरफ़ जमा हो गये। श्री कृष्ण की लीलाओं के भक्ति-पूर्ण गीत गाते हुए भजनवृंद चल पड़ा। धीरे-धीरे भक्तों की संख्या बढ़ती ही गई। वह जनसमूह जब काजी के निवास तक पहुँचा, तब उस जनसमुद्र को देख काजी अपने मकान से बाहर आये। उन्होंने भक्ति और श्रद्धा के साथ निमाई को प्रणाम किया।

निमाई के प्रथम शिष्य नित्यानंद पर एक बार दुष्ट जगाई और मथाई ने हमला किया और उसको पीटा। उस पर शराब से भरी बोतल भी फेंक दी। नित्यानंद के शरीर से खून बहने लगा। पर वह नाराज़ नहीं हुआ, उल्टे उन्हें उपदेश दिया कि वे कृष्ण के नाम का जप करें। इस बीच वहाँ निमाई आ पहुँचे। दुष्टों ने निमाई के चरणों पर गिर कर उन्हें प्रणाम किया।

कुछ समय बाद विष्णुप्रिया नाम की कन्या के साथ निमाई का विवाह हुआ। थोड़े दिन गृहस्थ जीवन बिताने के बाद निमाई ने सोचा कि उन्हें अब संन्यासी का जीवन बिताना चाहिए। वे एक दिन रात को घर से चल पड़े। प्रसिद्ध संन्यासी केशव भारती के दर्शन करके निमाई ने संन्यास ले लिया। उस दिन से वे कृष्ण चैतन्य के रूप में विख्यात हुए।

इसके बाद वे अपने कुछ विश्वास पात्र अनुगामियों के साथ पवित्रपुरी नगर के लिए रवाना हुए। दूर से ही पवित्र-पुरी क्षेत्र के दर्शन करके वे अत्यंत तन्मय हो उठे। उन्होंने वहाँ पर कवि, पंडित और साधुओं की संगति में स्थिर रूप से निवास बनाने का निश्चय किया।

कुछ समय बाद चैतन्य ने श्रीकृष्ण की लीला-भूमि के रूप में प्रसिद्ध वृंदावन की यात्रा की। वहाँ पर उन्होंने श्री कृष्ण की लीलाओं से संबंधित स्थानों को देखा। चैतन्य की प्रेरणा से उन प्रदेशों में कई नये मंदिर बनाये गये और पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार भी हुआ।

कृष्ण चैतन्य जब पुरी नगर में लौट आये, तब उड़ीसा के राजा प्रताप-रुद्ध और उनके मंत्री रामानंद राय ने भक्ति पूर्वक उनका स्वागत किया। ई. सन् १५५३ में वे किसी अज्ञात प्रदेश में चले गये। लेकिन उहोंने जो वैष्णव भक्ति का आन्दोलन चलाया, वह पूर्वी भारत में प्रत्यक्ष रूप में स्थिर हो गया और उसने अन्य प्रांतों को भी प्रभावित किया।

स्वावलंबन

हरिपुर का निवासी धनराज अपने माँ-बाप का इकलौता बेटा था। वह स्वभाव से ही डरपोक था। कोई भी काम खुद निर्णय नहीं कर पाता था। वह हर बात के लिए अपने माँ-बाप पर निर्भर रहा करता था। जब वह बड़ा हुआ, तब उसके माँ-बाप ने गुणमणि नाम की कन्या के साथ उसकी शादी कर दी।

थोड़े दिन बीत गये। गुणमणि के मन में साड़ियाँ खरीदने की इच्छा हुई। उसने यह बात अपने पति से बताई।

धनराज ने कहा—"सुनो, मैं अपनी माँ से पूछ लेता हूँ। न मालूम वह कितनी साड़ियाँ और किस तरह की साड़ियाँ खरीदने को कहेंगी।"

इसके बाद धनराज ने अपनी माँ कृष्णवेणी की सलाह के मुताबिक़ गुणमणि के लिए चार साड़ियाँ ख़रीद कर ला दीं।

एक हफ़्ते बाद धनराज के एक दोस्त की शादी का निमंत्रण-पत्र मिला। गुणमणि ने अपने पति को सुझाव दिया कि शादी के वक़्त कोई चीज़ भेंट देना मुनासिब होगा।

"मैं अपने बाप से पूछ लेता हूँ। वे जो चीज़ भेंट देने की सलाह देंगे, वही चीज़ ले जायेंगे।" धनराज ने कहा।

धनराज के दोस्त की शादी में पति-पत्नी हो आये। एक दिन गुणमणि ने अपने पति से पूछा—"मुझे माँ-बाप को देखने की इच्छा हो रही है। मै अपने मायके जाना चाहती हूँ।"

"मैं अपनी माँ से पूछ कर बता दूँगा। वे तुम्हें कब भेजना चाहेंगी। उनकी राय लेनी है न?" धनराज ने जवाब दिया।

इसके बाद धनराज ने अपनी माँ की सलाह के मुताबिक़ गुणमणि को उसके

सुरेश बत्रा

मायके भेज दिया। थोड़े दिन बाद गुणमणि को अपने ससुराल में छोड़ने के लिए उसका भाई आनंद आया।

एक दिन आनंद धनराज के पिता रामनाथ के साथ बातचीत कर रहा था। उस वक्त धनराज ने आकर पूछा–"बाबूजी, मैं बाजार जान चाहता हूँ।"

"हूँ, अच्छी बात है। हो आओ।" रामनाथ खीझकर बोला।

आनंद मुस्कुरा कर मजाक़ करते हुए बोला–"ऐसा मालूम होता है कि बहनोई साहब आपकी और सासजी की सलाह और अनुमति के बिना छोटे से छोटा काम भी नहीं करते!"

"हाँ, तुम ठीक कहते हो। उसका पालन-पोषण ही कुछ इस ढंग से हुआ है।" रामनाथ ने झट से जवाब दे दिया, फिर थोड़ी देर सोच कर बोला–"मेरी बहू का और तुम्हारा किस तरह से हुआ है?"

"हमारा पालन-पोषण कुछ दूसरे ढंग से हुआ है! हम हर छोटी सी बात के लिए अपने माँ-बाप की सलाह नहीं लेते।" आनंद ने कहा।

इसके बाद आनंद दो दिन अपनी बहन के घर रहा, तीसरे दिन अपने गाँव चला गया। तीसरे दिन सवेरे रामनाथ अपने बेटे से बोला–"मैं और तुम्हारी माँ एक महीने के लिए दक्षिण के पुण्य तीर्थों की यात्रा पर जा रहे हैं। कल सवेरे ही हम चले जायेंगे।"

अपने बाप के मुँह से ये बातें सुनकर धनराज घबरा गया और पूछा–"एक महीने के लिए? बाबूजी, इस बीच खेती-बाड़ी की बातों में मुझे सलाह देनेवाले कौन हैं?"

रामनाथ ने कोई जवाब नहीं दिया। मगर दूसरे दिन सवेरे वे तीर्थाटन पर चल दिये। इसके चार दिन बाद धनराज का एक दोस्त भूपति आ धमका। उसने धनराज से पूछा–"दोस्त, एक जरूरी काम आ पड़ा है। मुझे एक हज़ार रुपये उधार दे दो!"

धनराज गुणमणि के पास पहुँच कर बोला–"अब मैं क्या करूँ? इस बारे में सलाह लेने के लिए मेरे बाबूजी गाँव में नहीं हैं। मेरा दोस्त भूपति एक हज़ार रुपये क़र्ज मांग रहा है!"

"आप को खुद सोचना चाहिए कि क़र्ज देने पर आपका दोस्त चुका सकता है या नहीं? इस मामले में आपके पिताजी की सलाह और मेरी सलाह की क्या जरूरत है?" गुणमणि ने कहा।

एक हफ़्ता बीतने पर काश्तकार रामलाल ने आकर धनराज से पूछा–"मालिक, ईख बोने के दिन आ गये हैं। बताइये, कितने बीघों में ईख बोना है?"

"बाबूजी के बताने पर मैं ईख की बुआई करवाता था। अब मेरी समझ में नहीं आता कि कितने बीघों में बुआई करानी है?" धनराज ने गुणमणि से कहा।

"इस में समझ में न आने की कौन सी बात है? आप तो रोज खेतों में जाते ही हैं! हाल ही में जिन बीघों में ईख की कटाई हो गई है, उनमें तो फिर से बुआई नहीं करा सकते। कुछ बीघे धान रोपने के लिए छोड़ दीजिए; बाक़ी कितने खाली रह जाते हैं, आप समझ ही लेंगे।" गुणमणि ने इतमीनान से समझाया।

दो दिन के अन्दर सोच-समझकर धनराज ने कोई निर्णय लिया और उसके अनुसार ईख की बुआई पूरी कर दी। इसके बाद खेत और घर के मामलों में जब भी गुणमणि की सलाह माँगता, तब-तब वह यही जवाब देने लगी–"ये सारी बातें आप जानते ही हैं। मेरी सलाह की जरूरत ही क्या है?"

इस बीच धनराज को उसके पिता के यहाँ से चिट्ठी मिली कि वे कुछ और तीर्थ देखने के लिए जा रहे हैं, इसलिए उनके लौटने में कम-से-कम दो महीने और लग जायेंगे। इस कारण धनराज को अपने खेत और घर के मामलों में खुद

निर्णय लेना पड़ा। तीन महीने बाद उसके माँ-बाप तीर्थ यात्रा से लौट आये।

यह समाचार मिलते ही आनंद रामनाथ के घर आया। रामनाथ और धनराज के साथ बैठ कर आनंद खेतीबाड़ी संबंधी बातें कर रहे थे। उस वक़्त पुजारी गणपतशर्मा कुछ लोगों को साथ लेकर आ पहुँचा और पूछा–"महाशय, देवी का उत्सव मनाना है। आप भी अपने हिस्से का चन्दा दीजिए।"

रामनाथ कोई जवाब देने जा रहा था, तभी धनराज दखल देते हुए बोला–"अच्छी बात है। जरूर देंगे। मगर मेरी शर्त यह है कि नाचने व गाने वालों को कम-से-कम आध घंटा हमारे मकान के सामने प्रदर्शन करना होगा!" यों जवाब देकर वह घर के अन्दर गया, कुछ रुपये लाकर पुजारी के हाथ रख दिये। इसे देख रामनाथ बड़ा खुश हुआ। अपने बहनोई के अन्दर यह भारी परिवर्तन देख आनंद आश्चर्य में आ गया। इस बीच काश्तकार को आते देख धनराज वहाँ से चला गया।

धनराज की ओर विस्मयपूर्वक देखने वाले आनंद से रामनाथ बोला–"पिछली बार हमारी बातचीत के बाद मैं तुम्हारी सास को लेकर तीर्थाटन पर चल पड़ा। इस उम्र में मेरा बेटा किसी मामले में खुद निर्णय नहीं ले पाता था, तो इसका दोष उसके पालन-पोषण में था। लेकिन इस बात को समझने के लिए हमें बहुत समय लगा।"

"ओह ऐसी बात है!" आनंद ने कहा।

"हाँ, यही बात है। पंख उगने के बाद जब छोटे पक्षी उड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं, तब उन्हें खाना लाकर घोंसले में ही खिलाने की आदत डाल दे तो इसका नतीजा क्या होगा? बच्चे अपनी खुद की ताक़त को भी समझ न पायेंगे कि उनके भीतर उड़ने की शक्ति है! मेरे बेटे के मामले में भी ठीक यही बात हुई। चाहे जो हो, अब वह इस लायक़ हो गया कि अब वह सभी बातों में खुद निर्णय ले सके।" रामनाथ ने कहा।

बुरी खबर

सीताराम बड़ा आलसी था। वह सोमगुप्त की दूकान में नौकर था। बड़ा विश्वासपात्र था। और सोमगुप्त के पिता के जमाने से उस दूकान में था। इस वजह से अपने पिता के मरने के बाद भी उसने सीताराम को नौकरी से नहीं हटाया। उसके आलासीपन पर भी वह विशेष ध्यान नहीं देता था।

सीताराम एक दिन गाड़ी में माल लदवा कर शहर से गाँव लौट रहा था कि गाड़ी उलट गई। उसे चोट आई, मगर गाड़ीवाले ने उसे घर पहुँचा दिया। वैद्यों ने घावों पर मरहम-पट्टी की। सोमगुप्त भी उसे देखने आया और सहानुभूति दिखाते हुए बोला–"तुम्हारी जान बची, हम खुश हैं। अपने घाव भरने तक दूकान में न आना, मैं तुम्हारी तनख्वाह में कटौती नहीं करूँगा।"

सीताराम की पत्नी इसके पहले उसके आलसीपन पर खीझ उठती थी, मगर अब वह भी दिल लगा कर उसकी सेवा करने लगी। जो रिश्तेदार उसे देखने आये, वे लोग फल व तरकारी देते गये।

दस दिन बाद वैद्य ने पट्टी खोलते हुए कहा–"मुझे इस बात का अफ़सोस है कि तुम्हें एक बुरी ख़बर सुनानी पड़ रही है। तुम्हारे बदन के जोड़ बिलकुल कमजोर हो गये हैं। क़रीब दो-तीन महीने बाद ही तुम्हारे अंदर चलने-फिरने की ताक़त आएगी।"

ये शब्द कहकर वैद्य जाने को हुआ तो सीताराम ने उसे रुकने का संकेत करते हुए पूछा–"आपने कोई बुरी ख़बर सुनाने की बात कही, मगर वह ख़बर सुनाये बिना चले जा रहे हैं?"

यह सवाल सुन कर वैद्य अचरज में आ गया और जड़वत खड़ा ही रह गया।

परिवर्तन

सवेरा होते ही चैतन्य रसोई बनाने में लग गया। पर गली में कोलाहल सुनकर ड्योढ़ी पर आकर खड़ा हो गया। घर के सामने एक घोड़ागाड़ी खड़ी थी। दस-पंद्रह आदमी उसे घेरे हुए थे।

चैतन्य गाड़ी के नजदीक पहुँचा और झांक कर देखा। गाड़ी के अन्दर पचास साल का कोई बुजुर्ग आदमी दिल के दौरे से छटपटा रहा था।

गाड़ी को घेरे हुए कुछ लोग गाड़ीवाले को सलाह दे रहे थे—"इन की जान खतरे में है। जल्दी इनके गाँव में पहुँचा दो।"

गाड़ी वाला घोड़े को हांकने जा रहा था कि चैतन्य ने उसे रोक कर समझाया—"दिल के दौरे की हालत में यात्रा करना ठीक नहीं है। आराम की जरूरत होती है। मैं इनको अपने घर के अन्दर ले जाता हूँ।" इसके बाद चैतन्य ने गाड़ीवाले की मदद से उस बेहोश बुजुर्ग को घर के भीतर पहुँचाया और खाट पर लिटाया।

इसके बाद चैतन्य ने गाड़ीवाले को वैद्य के घर भेजा। वैद्य ने रोगी की जाँच करके दवा दी, बताया कि जान के लिए कोई खतरा नहीं है।

चैतन्य के माँ-बाप बचपन में ही गुजर गये थे। उसने अपने रिश्तेदारों की मदद से शिक्षा पूरी की और उसी गाँव में नौकरी भी पाई। घर के सारे काम-काज के साथ वह रसोई भी खुद बना लेता था।

चैतन्य रसोई का काम पूरा करके रोगी के पास पहुँचा। तब तक वह व्यक्ति होश में आ गया था। उसने चैतन्य से पूछा—"मैं इस वक़्त कहाँ पर हूँ?"

चैतन्य ने बुजुर्ग को सारा हाल कह सुनाया और पूछा—"बताइये, अब आपकी तबीयत कैसी है?"

रजनीकांत सिन्हा

बुजुर्ग चैतन्य की ओर कृतज्ञता-पूर्ण नज़र दौड़ा कर बोला–"मेरा नाम रामचन्द्र तिवारी है। तुमने वक़्त पर सहारा देकर मेरी जान बचाई। मैं दिल का मरीज़ हूँ। तुम्हारी इस मदद को मैं ज़िंदगी भर भूल नहीं सकता।"

इसके बाद चैतन्य ने रामचन्द्र तिवारी के नहाने का इंतज़ाम किया। फिर गरम-गरम खाना खिलाया। तिवारी को जब मालूम हुआ कि चैतन्य ने ही रसोई बनाई है, तो अचरज में आकर बोला–"रसोई बढ़िया बनी है। मुझे ऐसा लगता है कि मैं अपने ही घर में भोजन कर रहा हूँ।"

खाने के बाद थोड़ी देर आराम करके तिवारी ने अपने गाँव को जाना चाहा। मगर चैतन्य ने सोचा कि बीमार आदमी को अकेले भेज देना ठीक नहीं है। उसने दफ़्तर से एक दिन की छुट्टी ली और किराये की गाड़ी में तिवारी के साथ चल पड़ा।

गाँव पहुँचते-पहुँचते रात हो गई। तिवारी ने अपनी पत्नी, पुत्र और पुत्रियों के साथ चैतन्य का परिचय कराया और उसकी मदद की तारीफ़ की। सबने चैतन्य के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। दूसरे दिन तिवारी का पुत्र चैतन्य को गाँव दिखाने ले गया। इस बीच तिवारी ने अपनी पत्नी से कहा–"चैतन्य बुद्धिमान मालूम होता है। मैं समझता हूँ कि हमारी बेटी के लिए इस से अच्छे वर का मिलना नामुमकिन है।"

उस वक़्त तिवारी की बेटी पुष्पा वहीं पर थी। वह बड़े ही लाड़-प्यार में पली थी। वैसे वह रसोई बनाना अच्छी तरह से जानती थी, मगर रसोईघर से उसे चिढ़ थी। साथ ही वह अव्वल दर्जे की आलसी भी थी। अपनी माता के जवाब देने के पहले ही बीच में दखल देते हुए पुष्पा ने पूछा–"चैतन्य के साथ उनके घर में और कितने लोग हैं?"

"उसके कोई निकट के रिश्तेदार नहीं हैं। वह अकेला रहता है।" तिवारी ने कहा।

"अकेले ही रहते हैं ? उनकी रसोई कौन बनाता हैं ?" पुष्पा ने पूछा ।

"ख़ुद बना लेता है । ठीक तुम्हारी माँ की तरह खाना बनाता है ।" रामचन्द्र तिवारी मुस्कुराते हुए बोला ।

पुष्पा ने सोचा कि पिता के कथनानुसार चैतन्य बुद्धिमान और भला आदमी जान पड़ता है, साथ ही देखने में सुंदर लगता है । इसलिए वह और अधिक सवाल पूछे बिना चैतन्य के साथ शादी करने को राज़ी हो गई।

रात को खाना खाने के बाद तिवारी चैतन्य को छत पर ले गया और बोला— "तुम मेरे परिवार के सारे लोगों को पसंद आये हो । तुमने मेरी बेटी पुष्पा को देख लिया है न ? तुम्हारे साथ मैं उसकी शादी करना चाहता हूँ ।"

चैतन्य पलभर के लिए चकित रह गया । उसने इस बात की कल्पना तक न की थी । वह भी एकाकी ज़िंदगी से ऊब चुका था । पुष्पा सुंदर और स्वस्थ है, इसलिए उसके साथ शादी करने से इनकार करने का उसे कोई कारण दिखाई नहीं दिया । उसने अपनी स्वीकृति दे दी ।

इसके बाद महीने भर के अन्दर पुष्पा के साथ चैतन्य का विवाह हो गया । पुष्पा ससुराल में आ गई । दूसरे दिन सबेरे धूप चढ़ आने तक वह नींद से नहीं जागी ; दफ़्तर का वक़्त होता जा रहा था । जल्दी-जल्दी रसोई का काम पूरा करके चैतन्य खाना खाकर दफ़्तर चला गया ।

शाम को चैतन्य दफ़्तर से लौटा, तब पुष्पा मंदिर में गई थी । यह सोचकर कि कहीं देर न हो जाए, चैतन्य ने ख़ुद खाना बनाया ।

उस दिन रात को खाना खाते वक़्त, पुष्पा उत्साह में आकर बोली—"मेरे बाबूजी के कहने पर मैंने यक़ीन नहीं किया था । आप का बनाया यह खाना मेरी माँ के बनाए खाने की तरह ही है ।"

पत्नी की तारीफ़ सुनकर चैतन्य फूला न समाया । पर दूसरे दिन भी सवेरा होने के बाद पुष्पा को न जागते देख चैतन्य ने उसे

थपकी देकर जगाया और बोला—"दफ़्तर का वक़्त होता जा रहा है, तुम जल्दी उठ कर खाना बनाओ।"

रसोई की बात सुनते ही पुष्पा घबरा गई। उसे कुछ जवाब देते न बना, झट जंभाई लेते हुए बोली—"आज मेरी तबीयत कुछ अच्छी नहीं है।"

इस प्रकार कोई-न-कोई बहाना करते क़रीब एक हफ़्ते तक पुष्पा ने चैतन्य के हाथों से रसोई बनवाई। साथ ही घर की सफ़ाई का काम भी उसी से करवाया।

पति के सामने इस तरह बार बार बहाना करना पुष्पा को कुछ अच्छा न लगा। दूसरे दिन अपने माँ-बाप को देखने जाने की इच्छा प्रकट करके पुष्पा अपने मायके चली गई।

पुष्पा पंद्रह दिन बाद अपने मायके से लौट आई। उसी दिन चैतन्य से बोली—"अज़ी, मेरे लिए एक साड़ी खरीद लाइये।"

"इस वक़्त साड़ी की ज़रूरत क्या है? न पर्व निकट है और न त्यौहार ही?" चैतन्य ने खीझ कर पूछा।

"पर्व-त्योहारों से क्या मतलब? मैं तो महीने में एक साड़ी खरीद लेती हूँ। यह आदत मेरे मायके में रहते पड़ गई है।"

उस दिन शाम को चैतन्य ने अपनी पत्नी को दूकान में ले जाकर साड़ी खरीद कर दी। लौटते वक़्त गाड़ी में चढ़ते समय पुष्पा के

हाथ में मोच आ गई। इसलिए उस दिन भी चैतन्य को खाना बनाना पड़ा। इसके बाद भी कुछ दिन तक वह हाथ के दर्द का बहाना करके रसोई में घुसी तक नहीं।

मगर हर दिन इस तरह कोई-न-कोई बहाना बनाकर रसोई बनाने के काम से बचना पुष्पा को खुद भी बुरा लगा। उसने चैतन्य से पूछा–"अजी, हमारी शादी के पहले आपको कौन रसोई बना कर खिलाता था?"

"मैं खुद बना लेता था।" चैतन्य ने जवाब दिया।

यह जवाब पाकर पुष्पा खिल उठी और बोली–"हाँ, ऐसा कहिये! तो फिर आप मुझे रसोई बनाने को क्यों कहते हैं? जहाँ पहले मुट्ठी भर चावल पकाते थे, अब उस में एक मुट्ठी और डाल दीजिएगा। हमारा काम बन जाएगा; बस!"

यह उत्तर सुनने पर चैतन्य को पुष्पा के मन की बात समझने में देर न लगी। दूसरे दिन जब चैतन्य दफ़्तर जाने को हुआ, तब पुष्पा ने अपनी मांग पेश की–"सुनियेजो, दफ़्तर से लौटते वक़्त मेरे लिए एक अच्छी साड़ी खरीद लाइये।"

चैतन्य इसका कोई जवाब दिये बिना चुपचाप दफ़्तर चला गया। शाम को दफ़्तर से लौटते वक़्त अपनी परिचित एक दूकान में गया। एक लाल रंग की साड़ी दिखाते हुए बोला–"देखो भाई, यह साड़ी निकालो।"

"आप पिछली बार भी इसी तरह की एक साड़ी खरीद ले गये हैं। अब आप अपनी पसंद की किसी दूसरे रंग की साड़ी क्यों नहीं ले जाते?" दूकानदार बोला।

पर चैतन्य उसी साड़ी को चुनकर घर ले आया। उस साड़ी को देखते ही पुष्पा ने मुंह बना कर कहा–"हमने पिछली बार जिस रंग की साड़ी खरीदी थी, अब उसी रंग की साड़ी ले आये हैं। आप इसे लौटा कर कोई दूसरी साड़ी ले आइये।"

"फिर से मैं दूकान में कहाँ जाऊँगा ? तुम्हारे पास जो इतनी साड़ियाँ हैं, उनमें एक ही रंग की दो साड़ियाँ हो जाती हैं तो हर्ज ही क्या है ?" चैतन्य ने अपनी बात का समर्थन किया ।

"आप मेहरबानी करके अपनी होशियारी न जताइये । चाहे पच्चीसों साड़ियाँ हमारे पास क्यों न रहें, कोई भी औरत एक ही रंग की साड़ियाँ पहनना पसंद नहीं करती । रंग में और बुनाई में कुछ न कुछ नयापन होना चाहिए न?" पुष्पा बोली।

"तुम साड़ियों में एक ही रंग की दो साड़ियों को पहनना पसंद नहीं करतीं, ऐसी हालत में तुम यह क्यों चाहती हो कि मेरी जिंदगी में भी शादी के पहले और बाद को समरसता ही बनी रहे ? मेरी भी जिंदगी में कुछ नयापन और परिवर्तन होना चाहिए न ? मैं यह सोच कर आज तक तुम्हारी हरकतों को सहन करता गया कि तुम्हारे पिता की तबीयत ठीक नहीं है और उनके दिल को ठेस नहीं पहुँचनी चाहिए ।" यह कह कर चैतन्य साड़ी लेकर दूकान की ओर चल पड़ा ।

पुष्पा ने अपने पति की बातों में छिपी सचाई को भांप लिया । उसने आज तक अपने पति के दिल को दुख पहुँचाया था, इसकी कल्पना मात्र से पुष्पा की आँखों में आँसू छलछला उठे । उसे इस बात की याद हो आई कि उस के पिता जब उसकी माँ की रसोई की तारीफ़ कर देते, तब उसकी माँ की आँखों में कैसी चमक और संतुष्टि झलक उठती थी ।

चैतन्य दो घंटों के अन्दर कोई दूसरे रंग की साड़ी लेकर घर पहुँचा । पुष्पा ने इस बीच रसोई बना ली और अपने पति को देख बोली–"मेरी मूर्खता को कृपया क्षमा कर दीजिए ।"

"मूर्ख अपनी गलती को नहीं समझते । तुमने अपनी गलती समझ ली इसलिए तुम मूर्ख कैसे हो सकती हो ?" यों कह कर मुस्कुराते हुए चैतन्य ने दूकान से लाई नीले रंग की साड़ी पुष्पा के हाथ में रख दी ।
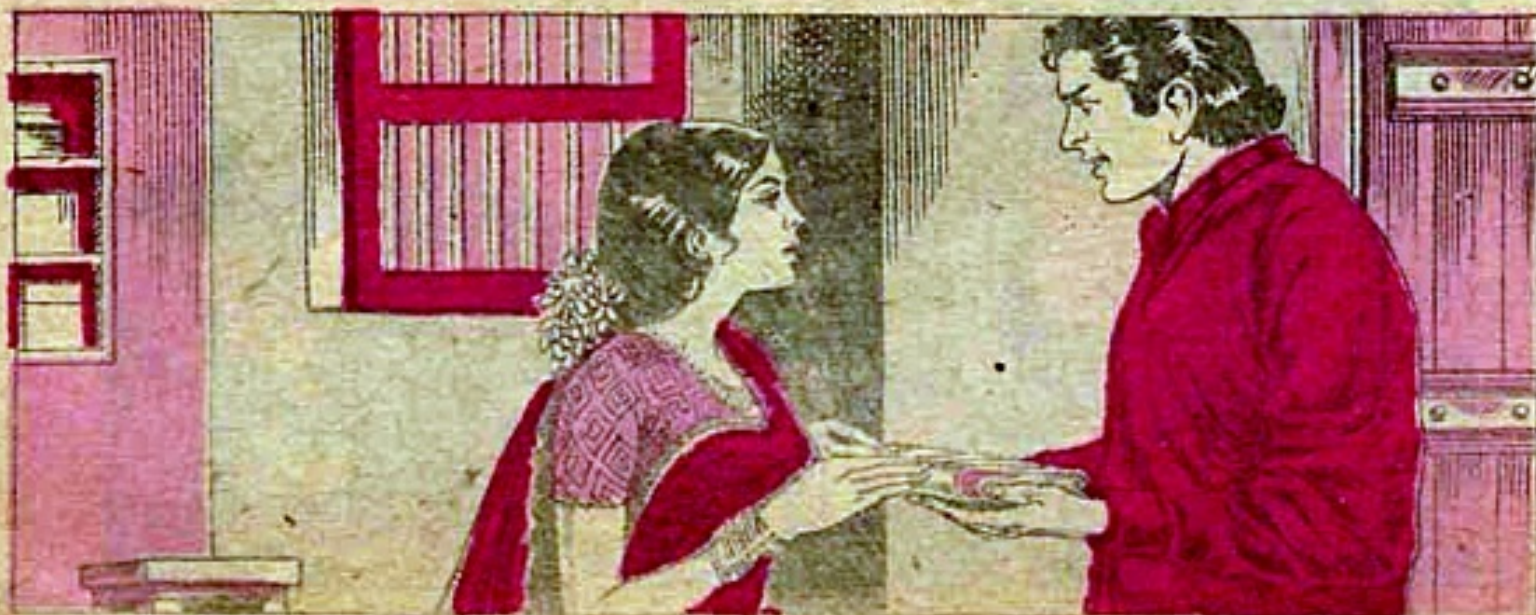
क्रोध का रूप

एक चित्रकार एक जमींदार के दर्शन करने गया। उस वक्त जमींदार गुस्से में था। चित्रकार की एक भी बात सुने बिना उसे डाँट कर घर भेज दिया।

कुछ दिन बाद चित्रकार फिर से जमींदार से मिलने गया। उसने एक चित्र जमींदार के हाथ देकर कहा–"महानुभाव, मैंने आप का चित्र बनाया है। यह चित्र बड़ा सुंदर बना है। इसलिए आप मुझे कोई बढ़िया पुरस्कार दीजिए।"

उस वक्त जमींदार का दरबार लगा हुआ था। उस चित्र को देख जमींदार गुस्से में आया और उसे दरबारियों की ओर फेंक कर गरज कर बोला–"तुम पागल तो नहीं हुए हो? क्या यही मेरा चित्र है?"

"जी हाँ, पहली बार मैंने जब आप के दर्शन किये, तब आप का यही रूप था।" चित्रकार ने कहा।

दरबार के एक खंभे पर टंगे आइने में अपने प्रतिबिंब को देख जमींदार चौंक उठा। वह चित्रकार के द्वारा खींचे गये चित्र के अनुरूप था।

दरबारी जमींदार के चित्र को देख आश्चर्य में आ गये, क्योंकि उस वक्त जमींदार का जो रूप था, बिलकुल वही रूप चित्र में अंकित था। क्रोध अपने रूप को कैसे बदल देता है, इसे दिखानेवाले चित्रकार का जमीन्दार ने सम्मान किया। इसके बाद वह कभी किसी पर नाराज़ न हुआ।

विष्णु पुराण

सूतमहर्षि ने नारदमुनि की कहानी सुनाना प्रारंभ किया—पिछले जन्म में नारद ने एक दासी-पुत्र के रूप में जन्म लिया था। वह दासी एक भक्त के घर में काम किया करती थी। उस भक्त के घर में सदा ऋषि-मुनि, साधु-संत अतिथि-सत्कार पाया करते थे। बालक नारद उन ज्ञानियों की सेवा में लगा रहता था। ज़रूरत के वक़्त उन्हें पानी पिलाया करता था। उनका वार्तालाप ध्यान से सुना करता था। विष्णु भगवान की महिमाओं की चर्चा भी बड़ी श्रद्धा व भक्ति से सुनता था। नीर याने पानी देनेवाले बालक का नामकरण "नारद" करके वे लोग इसी नाम से उसे पुकारा करते थे।

इस बीच नारद की माँ सांप के डसने से मर गई। बालक नारद को अपने पिता का बिलकुल पता न था। उसके साथी नारद को दासी-पुत्र और अनाथ बालक कहा करते थे। कुछ ही दिनों में उस मकान के मालिक का स्वर्गवास हुआ।

नारद को कहीं आश्रय नहीं मिला। वह इधर-उधर भटकता था। भूख लगने पर यदि वह किसी मकान के सामने जाकर खड़ा हो जाता तो लोग उसे भगा देते थे। उल्टे गालियां देते थे कि यह बालक ऐसा पापी है जिसे अपने पिता का भी पता नहीं है। नारद साधु स्वभाव का था। इसलिए नटखट बच्चे निडर होकर उसपर

३. ध्रुवनारायण का अवतार

पत्थर फेंकते, और उसे सता-सता कर आनंद का अनुभव करते थे।

गाँव के लोगों से तंग आकर नारद सोचने लगा—"इन मनुष्यों के बीच मेरा जन्म क्यों हुआ है? मैंने कौन-सा अपराध किया है? ये लोग मेरे प्रति ऐसे अत्याचार क्यों करते हैं? आखिर कीड़े-मकोड़े, जंगल के जानवर भी मजे से जी रहे हैं।" यों सोचते नारद जंगल की ओर चल पड़ा। उसे मुनियों और ज्ञानियों की बातें याद हो आईं।

"मुझे भी तपस्या करके देवताओं के बीच जन्म लेना है!" यों निश्चय कर नारद ने तपस्या करना शुरू किया।

"अनाथों का जो रक्षक है, जो सारे जगत का पिता है, वही मेरे लिए भी पिता है। वे मुझे कुछ भी बनायें, पसंद है।" इस प्रकार सोचते नारद ने समय का ख्याल किये बिना भयंकर तपस्या शुरू की। नारद की तपस्या पूर्ण हो गई। उसके भीतर एक तेज ने प्रवेश किया।

एक ज्योति के रूप में प्रत्यक्ष होकर विष्णु भगवान ने कहा—"वत्स नारद, तुम मेरे अन्दर विलीन होने जा रहे हो! इसके बाद तुम ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में जन्म धारण करोगे! तुम्हारे भीतर मेरा अंश होगा! तुम चिरंजीवी होकर तीनों लोकों का भ्रमण करते हुए सदा मेरी स्तुति किया करोगे!"

इसके बाद नारद ने विष्णु के अंश को लेकर ब्रह्मा के मानस पुत्र के रूप में जन्म लिया और देवमुनि के रूप में पूजा पाने लगे। विष्णु भगवान की लीलाओं के अवतारों में एक नारद का अवतार भी बताया गया है!

ऐसे नारदमुनि से उपदेश पाकर ध्रुव तेज गति के साथ आगे बढ़े चले जा रहे थे। उस समय उत्तमकुमार रोते हुए आ पहुँचा, ध्रुव के सामने हाथ फैला कर उनको रोकते हुए बोला—"भैया, आप कृपया जंगल में मत जाइये! आप जंगल में

चले जायेंगे तो मैं किसके साथ मिलकर हरि का भजन करूँगा? मेरी माताजी ने आप को डांटा, पर मैंने क्या किया है? मुझ पर आप क्यों नाराज़ होते हैं? आप रुक जाइये।" यों कहते उत्तम फूट-फूट कर रोने लगा।

ध्रुव ने उत्तमकुमार के गले लगकर समझाया—"मेरे छोटे भैया! मेरी माताजी ने मुझे जन्म दिया। मुझे क्या यह साबित नहीं करना है कि मेरी माताजी भी महान हैं? इसीलिए मैं जा रहा हूँ!"

उत्तम बोला—"तब तो मैं भी आप के साथ जंगल में चलूँगा! आप तपस्या में लग जाइये। मैं आपके वास्ते कंद-मूल और फल लाया करूँगा।"

"ऐसा करने पर तुम्हारी माँ रोयेंगी! मेरे छोटे भाई! मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ। इसलिए तुम्हें मेरी बात माननी ही पड़ेगी। जाओ!" ध्रुव ने कहा।

ध्रुव के मुँह से ये बातें सुनकर उत्तमकुमार वहीं पर लुढ़क पड़ा और रोने लगा। सुरुचि आकर उसे समझाने लगी। इसपर उत्तम गुस्से में आकर बोला—"माँ, तुम मुझे छुओ मत! तुम्हारी वजह से ही बड़े भैया जंगल में चले जा रहे हैं!"

सुरुचि लज्जा के मारे सर झुकाकर अपने को कोसने लगी—"मैं पापिन हूँ! मेरे ही कारण यह सब हुआ।" इतने में राजा उत्तानपाद पहुँचकर बोले—"ध्रुव! तुम रुक जाओ! यह सब मेरी मंद बुद्धि की वजह से ही हुआ है। मेरा राज्य तुम्हारा है। वापस चलो!"

इस बीच ध्रुव काफी दूर तक चले गये थे। नारद ने सुनीति से कहा—"माताजी, तुम्हारे गर्भ से एक रत्नजैसा पुत्र पैदा हुआ है। तुम अपने बेटे के बारे में बिलकुल चिंता मत करो! नारायण ही उसकी रक्षा करेंगे।" फिर उत्तानपाद की ओर मुड़कर नारद बोले—"राजन्, हम सबको इस बात पर खुश होना चाहिए! आपके पिता और ध्रुव के दादा

स्वायंभुव मनु के वंश के लिए भी बालक ध्रुव अपार यश का कारण बनेगा। इसमें किसी का कोई दोष नहीं है। यह श्रीमन्नारायण का संकल्प है!" यों समझाकर नारदमुनि ने सब को शांत किया।

मधुवन में बैठकर ध्रुव "ओम् नमोनारायणाय" का मंत्र जापते तपस्या कर रहे थे। यमुनानदी उस मंत्र में श्रुति मिला रही थी। ध्रुव की तपस्या पर तीनों लोक थर-थर कांपने लगे।

कोई यदि कहीं भी तपस्या करता हो, तो इंद्र यह सोच कर डरते हैं कि कहीं वह तप करके उनके पद की कामना न कर बैठे। इस डर से उनके तप में विघ्न डालने के लिए वे भयंकर इंद्रजाल रचा करते हैं। इसी प्रकार इंद्र ने अपने वज्रायुध को हिला कर आंधी-तूफान और बिजली गिराकर भयंकर उत्पात मचाये; पर ध्रुव थोड़ा भी विचलित न हुए। इस पर इंद्र ने पत्थरों की वर्षा शुरू की। मगर ध्रुव के सर पर घूमते हुए विष्णुचक्र ने उन पत्थरों को दूर फेंक दिया।

उस समय नारद ने जाकर इंद्र को समझाया—"आप ने ध्रुव को साधारण बालक मात्र समझा है। आप उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। आपको व्यर्थ में अपमानित होना पड़ेगा। इंद्रपद तो ध्रुव के लिए घास के तिनके के बराबर है।"

अंत में ध्रुव की तपस्या पर प्रसन्न हो विष्णु भगवान प्रत्यक्ष हुए। ध्रुव विष्णु के पैरों से लिपटकर अपार आनंद के मारे मूक रह गये। वे अपने मन में सोचने लगे—"भगवान! मैं पूर्ण हृदय से आपकी स्तुति करना चाहता हूँ। लेकिन मैं एक छोटा बालक हूँ! आप की स्तुति करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं!"

इस पर विष्णु ने अपने शंख को ध्रुव के गालों पर छुआ दिया। दूसरे ही क्षण वेदों के तत्वों से भरे स्तोत्र-पाठ साम गान के रूप में ध्रुव के मुंह से निकलने लगे।

विष्णु ने मंदहास करते हुए पूछा–"ध्रुव! माँग लो, तुम क्या चाहते हो?"

ध्रुव भक्ति पूर्वक बोला–"हे परम पुरुष! जैसे भौंरा कमल से हमेशा लगा रहता है, वैसे ही सदा आप के मधुर मंदहास वाले मुख पद्म को देखते रहने की मेरी इच्छा है! इससे बढ़कर मैं कुछ नहीं चाहता!"

"अच्छी बात है! लेकिन इससे पहले तुम अपने राज्य में जाकर धर्म का पालन करते हुए शासन करो। इसके बाद तुम मेरे विश्वरूप के शिरो भाग बने ध्रुव पद पर पहुँच जाओगे। कल्पांतों के समाप्त होते रहने पर भी तुम उस अचल पद को ग्रहण कर सदा प्रकाशमान रहोगे।" यों समझा कर विष्णु भगवान अंतर्धान हो गये।

इसीलिए ध्रुव को अनुग्रह प्रदान करनेवाले विष्णु का अवतरण 'ध्रुव नारायणावतार' कहा गया है।

इसके बाद ध्रुव अपनी महिष्मती पुरी में आ गये। उत्तानपाद ध्रुव को अपना राज्य सौंप कर तपस्या करने चले गये। ध्रुव का शासन अच्छे ढंग से चलता रहा।

उत्तमकुमार का अभी तक विवाह न हुआ था। राजधर्म के अनुसार जंगली जानवरों से जनता की रक्षा करने के लिए वह शिकार खेलने गया। हिमालय के पहाड़ी जंगलों में दुष्ट यक्षों ने उस पर हमला करके उसको मार डाला।

अपने पुत्र की मृत्यु पर सुरुचि दुखी हो वहाँ पर पहुँची और जंगल के दावानल में फंसकर भस्म हो गई।

ध्रुव ने यक्षों का नाश करने के लिए यक्षनगर अलकापुरी को घेर लिया। मायावी यक्षों ने अपनी क्षुद्र मायाओं का उन पर प्रयोग किया। ध्रुव ने नारायण अस्त्र के द्वारा मायाओं को विफल बनाकर उनको हरा दिया। यक्ष-राज कुबेर ध्रुव की शरण में आये। उनसे मैत्री करके उनको संपति देखर वापस भेज दिया। ध्रुव के कई पुत्र हुए। उन्होंने अनेक

वर्षों तक आदर्शपूर्ण शासन करके स्वायंभुव मनुवंश को यश प्रदान किया। अनेक वर्षों तक शासन करने के बाद ध्रुव ने अपने ज्येष्ट पुत्र का राज्याभिषेक किया और वे बदरिकाश्रम में चले गये। वहां पर भगवान विष्णु का ध्यान करते स्वर्ण शरीर को प्राप्त किया।

भगवान विष्णु के आदेश पर उनके सेवक एक बिमान ले आये। वे लोग भी देखने में विष्णु के जैसे थे और उनके चार हाथ थे।

ध्रुव उन दूतों से बोले—"मेरी माताजी के लिए जो पद प्राप्त नहीं है, उसकी मुझे भी जरूरत नहीं।" इस पर विष्णु के दूतों ने उनके आगे एक दिव्य विमान में जानेवाली सुनीति को दिखाया। इसे देख ध्रुव प्रसन्न हो उठे। वे विमान पर सवार हो ग्रह मण्डल, नक्षत्र मण्डल तथा सप्तर्षि मण्डल को पारकर ध्रुव पद पर पहुँचे। ध्रुव मण्डल को ही विष्णु पद और ध्रुवक्षति भी कहते हैं। विष्णु का निवास वैकुण्ठ भी वहीं पर है। ध्रुव देति में गोलोक भी होता है। गोलोक में विष्णु दोनों हाथों से प्रकृति स्वरूपिणी राधादेवी के साथ मिलकर वेणुगान करते हुए आनंद भोगते रहते हैं। गोलोक के ऊपर गहरा अंधकार छाया रहता है। उस अंधकार के पार विष्णु वैकुण्ठवासी बने प्रकाशमान होते हैं! ध्रुव सदा विष्णु को देखते उज्वल कांति से द्युतिमान हो उठे। खूंटे से बंधी गाय की भांति सप्तर्षि मण्डल उनकी प्रदक्षिणा किया करता है। समस्त ग्रह गणों से पूर्ण शिशुमार चक्र उनके नीचे परिभ्रमण करता रहता है।

गोलोक के नीचे ब्रह्मा का निवास सत्यलोक, तपलोक जनलोक, महलोक, स्वलोक, भुवलोक, भूलोक नामक सात ऊर्ध्वलोक, तथा भूलोक के नीचे अधोलोक कहलानेवाले अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल लोक ये सातों मिलाकर चौदह लोकों के ऊपर विश्व के शिखराग्र पर ध्रुव समस्त दिशाओं

Sankar
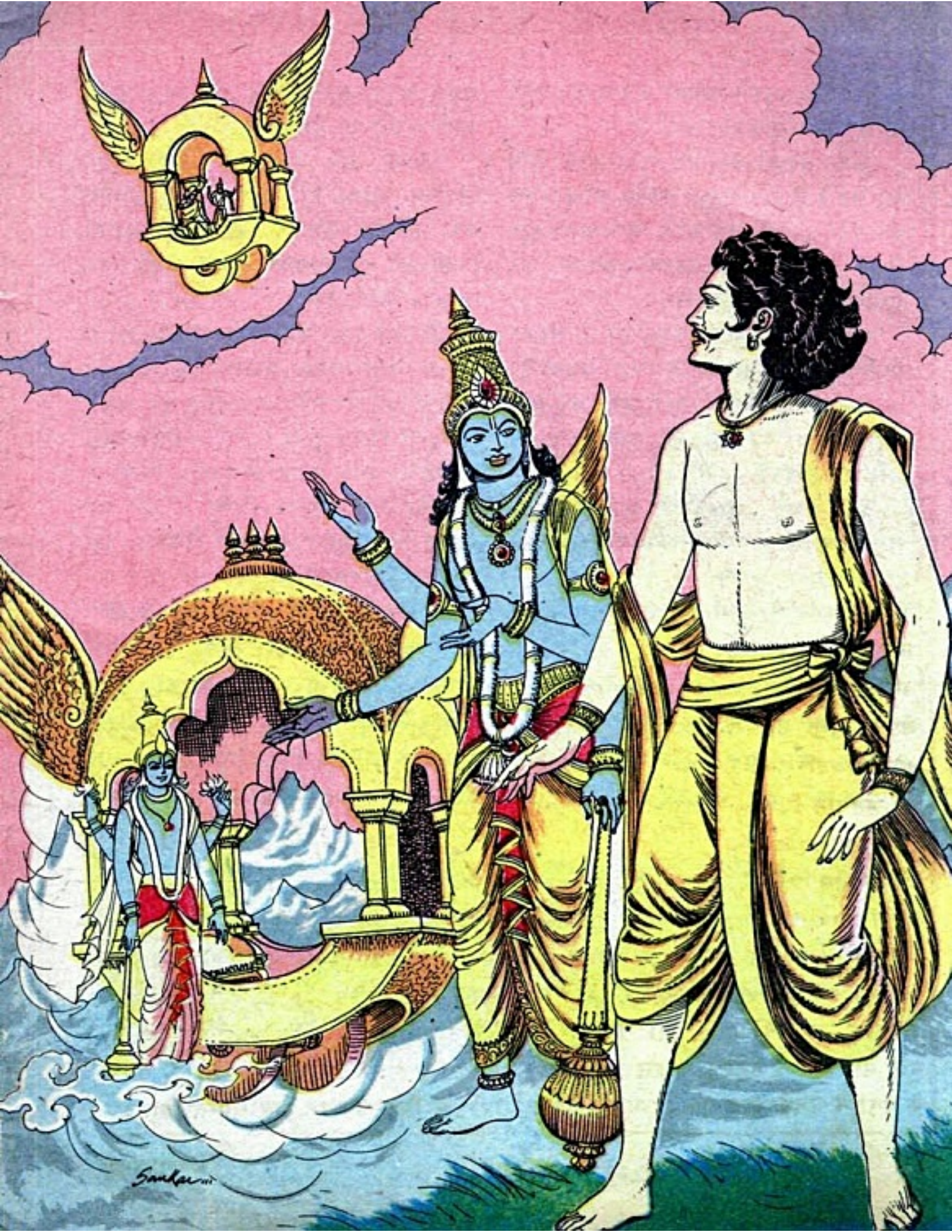
के लिए दिशासूचक बनकर अचल पद नक्षत्र के रूप में प्रकाशमान रहते हैं।

लगन हो तो छोटे-बड़े सभी कार्य साधे जा सकते हैं। इसका प्रमाण पांच साल की उम्र में ही तप करने जानेवाला ध्रुव है।" यों ध्रुव की कहानी समाप्त कर सूतमहर्षि फिर सुनाने लगे :

अगर मत्स्य केवल जलचर हो तो कच्छप याने कछुआ जल और भूमि पर भी चलता है।

जल में से प्राणी भूमि पर आ गया याने जलचर की दशा से भूचर तक का परिणाम हुआ है।

इसी प्रकार कछुए के रूप में विष्णु अवतरित हुए। इन्हीं दशावतारों में से दूसरा अवतार कूर्मावतार है।

इन शब्दों के साथ सूतमुनि ने कूर्मावतार की कहानी शुरू की :

देवता व राक्षस क्षीर सागर का मंथन करके अमृत पाने के लिए तैयार हो गये। बाहुबल और संख्या की दृष्टि से भी शक्तिशाली बने राक्षसों ने सोचा कि अगर अमृत प्राप्त होगा तो सारा अमृत उन्हीं लोगों का हो जाएगा।

राक्षसों को अमृत के द्वारा अगर अमरत्व प्राप्त हो जाएगा तो हमारा क्या नुक़सान होगा? सारी जिम्मेदारी विष्णु की ही मानकर देवता उन्हीं पर विश्वास करने लगे।

क्षीरसागर पर मंदर पर्वत को मथानी के रूप में खड़ा करके महासर्प वासुकी को रस्से के रूप में लपेट कर समुद्र का मंथन करने का निर्णय हुआ। लेकिन मंदर पर्वत को लाकर क्षीर सागर में डालना किसी के लिए मुमकिन न था। विष्णु ने उन पर अनुग्रह करके यह काम संपन्न किया। इस प्रकार वे गिरिधारी कहलाये।

राक्षसों ने वासुकी सर्प के सर के छोर को पकड़ने का हठ किया, विष्णु ने देवताओं को समझाया कि वे राक्षसों की बात मान ले, तब विष्णु ने भी सब के अंत में वासुकी की पूंछ के छोर को पकड़ लिया। इसके बाद क्षीर सागर को मथने का काम शुरू हुआ।

तीन सवाल
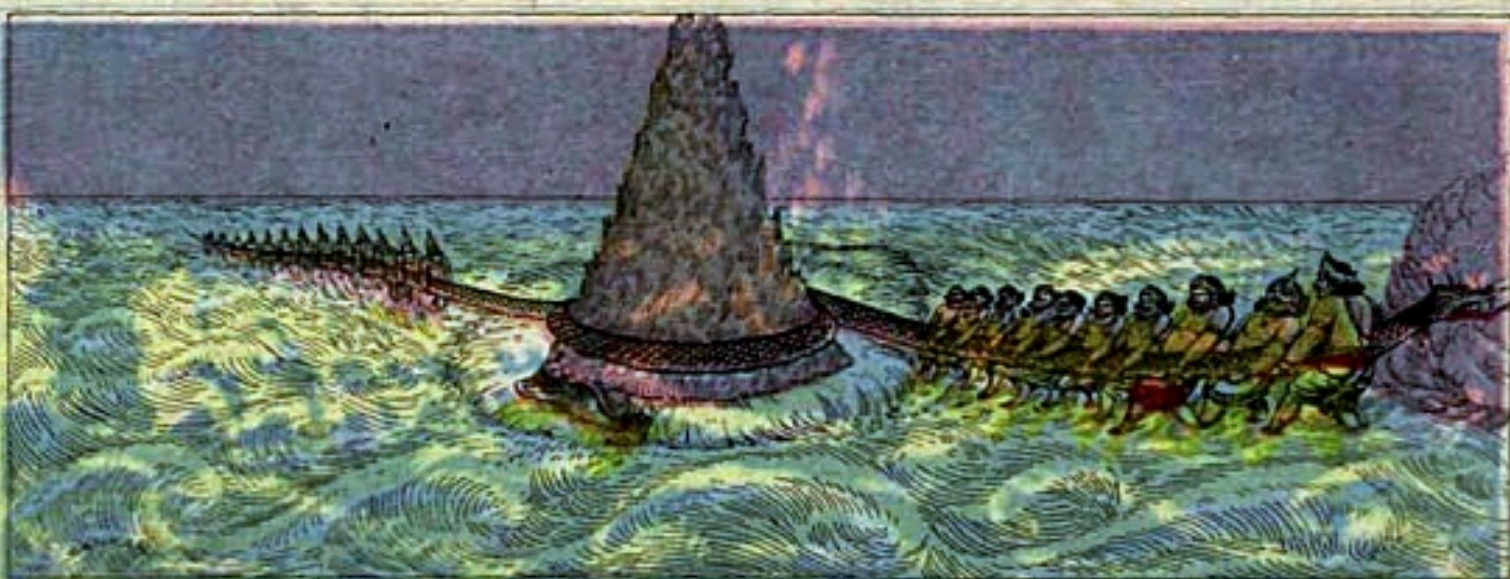
विन्ध्याचल के समीप शंभुनाथ नामक एक युवक रहा करता था। वह एक पहाड़ी घाटी में खेतीबाड़ी करके किसी तरह से अपना और अपनी माँ का पेट पालता था। एक दिन उसके मन में एक संदेह पैदा हुआ। वह यह कि उसकी उम्र के लोग उसीकी भांति मेहनत करके अमीर बनते जा रहे हैं, लेकिन वह साल भर मेहनत करने पर भी भरपेट खा नहीं पा रहा है। ऐसा क्यों?

उस प्रदेश में एक कहावत प्रचलित थी–'शंका हो तो अंगीरस महामुनि से पूछ लो!' लोग कहा करते थे कि अंगीरस महामुनि नासिक के पास पहाड़ों में तप किया करते हैं। वे बड़े ही पहुँचे हुए महात्मा हैं।

शंभुनाथ ने अपनी शंका अंगीरस महामुनि के सामने प्रकट करके उसका समाधान पाना चाहा। इस विचार के आते ही उसने अपनी माँ से कहा–"माँ, मैं नासिक जा रहा हूँ।" लेकिन माँ के मना करने पर भी उसकी बातें अनसुनी करके वह घर से चल पड़ा।

काफी दूर चलने पर एक निर्जन प्रदेश में उसे एक झोंपड़ी दिखाई दी। उसे बडी भूख लगी थी। झोंपड़ी के पास पहुँच कर उसने बूढ़ी नानी से पूछा– "नानी, मुझे बड़ी भूख लगी है। खाना खिलाओ।"

बूढ़ी ने शंभुनाथ को भर पेट खाना खिला कर पूछा–"बेटा, तुम कहाँ जाते हो? किस काम पर जाते हो?"

"नानीजी, मैं कड़ी मेहनत करता हूँ। फिर भी मेरी गरीबी दूर नहीं होती है। इसी के बारे में अंगीरस महामुनि से समाधान पाने के लिए जा रहा हूँ।"

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

शंभुनाथ ने बूढ़ी को विनयपूर्वक जवाब दिया।

"बेटा, तब तो उनसे एक और सवाल पूछो! मेरी पोती देखने में सुंदर है। अट्ठारह साल की हो गई है। लेकिन वह बोल नहीं पाती, गूंगी है! उनसे इसका कारण पूछ लो, बेटा!"

शंभुनाथ नानी को वचन देकर वहाँ से चल पड़ा। बहुत दूर जाने पर गाँव के बाहर उसे एक मकान दिखाई दिया। उस मकान के पास पहुँच कर शंभुनाथ ने उसके मालिक से पूछा—"महाशय, मैं बड़ी दूर से चला आ रहा हूँ। आज सुबह से भूखा हूँ। क्या आप मुझे थोड़ा खाना दिला सकते हैं?"

मकान मालिक ने उसे खाना खिलाया और पूछा—"बेटा, तुम कहाँ जाते हो? और किस काम पर जाते हो?"

"मेरे बहुत मेहनत करने पर भी मेरी दरिद्रता दूर नहीं हो रही है! उसका कारण नासिक के पास रहनेवाले अंगीरस महामुनि से जानने के लिए जा रहा हूँ।" शंभुनाथ ने कहा।

"ओह, ऐसी बात है! तब तो मेरी भी एक बात उनसे पूछ लो। मेरे पिछवाड़े में लहलहानेवाला नारंगी का पेड़ है। उसमें एक भी फल नहीं लग रहा है। इसका कारण उस महामुनि से पूछ लो, बेटा!" गृहस्थ ने कहा।

शंभुनाथ ने गृहस्थ की बात मान ली और वहाँ से चल पड़ा। कई घंटे की यात्रा के बाद उसे घने जंगल के बीच एक आश्रम दिखाई दिया।

उस आश्रम में एक मुनि निवास करते थे। मुनि के पास पहुँचकर शंभुनाथ ने पूछा—"महात्मा, मुझे भूख लगी है। थोड़ा खाना खिला सकते हैं?"

मुनि ने उसे खाना खिला कर पूछा—"बेटा, तुम कहाँ जाते हो? किस काम पर जाते हो?"

"मैं अंगीरस महामुनि से यह जानने के लिए जा रहा हूँ कि मेरे बहुत मेहनत

करने के बावजूद भी मेरी गरीबी दूर क्यों नहीं हो रही है?" शंभुनाथ ने उत्तर दिया।

"तब तो उनसे मेरे एक सवाल का भी जवाब पूछ लो! मैं कई वर्षों से कुछ सिद्धियाँ पाने के वास्ते तपस्या कर रहा हूँ। लेकिन मेरी तपस्या सफल नहीं हो रही है। इसका कारण क्या है?" मुनि ने कहा।

शंभुनाथ ने मुनि की बात मान ली। इसके बाद कई दिन यात्रा करके आखिर वह बड़े प्रयास के साथ अंगीरस महामुनि के आश्रम में पहुँचा।

महामुनि अंगीरस प्रेम पूर्वक शंभुनाथ को अपने आश्रम के अन्दर ले गये, उसे खिलाया-पिलाया और उसके आने का कारण पूछा।

"महात्मा, मैं आप से चार संदेहों का समाधान जानने के लिए आया हूँ।"

"बेटा, मेरा नियम यह है कि मैं एक साथ तीन संदेहों का समाधान मात्र देता हूँ। इसलिए तुम अपने चार संदेहों में से एक को छोड़कर बाक़ी तीन सवाल मेरे सामने रखो!" अंगीरस ने समझाया।

शंभुनाथ थोड़ी देर तक सोचता रहा, आखिर वह इस निश्चय पर पहुँचा कि

इन चार संदेहों में से उसी का संदेह किसी काम का नहीं है। इसके बाद उसने गूंगी युवती, फल न लगनेवाले नारंगी के पेड़ तथा सिद्धियाँ न पानेवाले मुनि के

बारे में सवाल करके अंगीरस महामुनि से उनके जवाब प्राप्त किये।

उसके बाद शंभुनाथ अंगीरस महामुनि से विदा लेकर चल पड़ा। सब से महले जंगल में तप करनेवाले मुनि के पास पहुँचा। मुनि ने जिज्ञासा पूर्वक शंभुनाथ से पूछा–"बेटा, अंगीरस महामुनि ने मेरे सवाल का क्या जवाब दिया है?"

"अंगीरस महामुनि ने बताया है कि आपके सर पर कोई मूल्यवान मणि है। आप की सारी तपस्या की शक्ति उसी में जा रही है। अगर आप उस मणि को अपने सर पर से हटा देंगे तो आपकी तपस्या सफल होगी!" शंभुनाथ ने समझाया।

मुनि ने आश्चर्य में आकर अपनी जटाओं में टटोला, उनके हाथों में एक रत्न आ गया। उसे निकालकर शंभुनाथ के हाथ देकर बोला–"बेटा, तुम इस मणि को ले लो! अब मैं अपनी तपस्या के द्वारा जल्दी सिद्धियाँ पा लूंगा।"

शंभुनाथ मुनि से विदा लेकर गृहस्थ के पास पहुँचा।

"बेटा, मेरे सवाल का अंगीरस महामुनि ने क्या जवाब दिया है?" गृहस्थ ने बड़ी आतुरता से पूछा।

"महामुनि ने बताया है कि नारंगी के पेड़ के नीचे नौ कलशों में सोना भरा हुआ है। उनको हटाने पर वह खूब फल देगा।" शंभुनाथ ने कहा।

गृहस्थ ने सोचा कि यह रहस्य दूसरों पर प्रकट हो जाना खतरे से खाली नहीं है, अतः शंभुनाथ की मदद से उस दिन रात को गृहस्थ ने पेड़ के नीचे की जमीन खोद डाली।

सचमुच नौ सोने से भरे कलश निकल आये। इस पर गृहस्थ ने कहा–"बेटा, तुमने मेरा बड़ा उपकार किया है। इसलिए इन कलशों में से एक तुम ले जाओ!"

यह सुन शंभुनाथ कलश लेकर बूढ़ी नानी की झोंपड़ी में पहुँचा।

"बेटा, तुमने मेरी पोती के बारे में अंगीरस महामुनि से पूछा? उन्होंने क्या जवाब दिया है बेटा?" बूढ़ी ने पूछा।

"मैंने पूछ लिया है, नानीजी! महामुनि अंगीरस ने बताया है कि तुम्हारी पोती जब अपनी पसंद का वर देखेगी, तभी उसका गूंगापन दूर हो जाएगा!" शंभुनाथ ने कहा।

ठीक उसी वक़्त बूढ़ी की पोती वहाँ पर पहुँची। शंभुनाथ को देखते ही लज्जा के मारे उसके गाल लाल हो गये। वह बूढ़ी से बोली–"नानीजी, ये कौन हैं?"

बूढ़ी सचमुच अचरज के मारे चकित हो गई और बोली–"बेटी, सचमुच तुम्हारा गूंगापन दूर हो गया है। तब तो यही युवक तुम्हारा पति है। मैं आज ही तुम दोनों की शादी करवा दूंगी।"

इसके बाद शंभुनाथ उस युवती के साथ शादी करके मणि और सोने के कलशों को लेकर पत्नी सहित घर लौटा। इस बीच शंभुनाथ की माँ अपने बेटे के वास्ते रो-रोकर अपनी आँखें खो बैठी और अंधी हो गई थी। अपने बेटे की आवाज़ सुनकर वह खुश तो हो गई, लेकिन वह अपने बेटे और बहू को अपनी आँखों से देख न पाई।

शंभुनाथ ने मणि निकाल कर अपनी माँ की आँखों के सामने रखा और पूछा–"माँ, क्या तुम इस मणि को भी नहीं देख पाती हो?"

शंभुनाथ की माँ ने उस मणि को अपने हाथ में लेकर आँखों के सामने रखा और बोली–"बेटा, मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा है!" पर इस बीच वह मणि बूढ़ी की आँखों से छू गया। दूसरे ही क्षण उसकी दृष्टि लौट आई। शंभुनाथ ने समझ लिया कि मुनि की सारी तपस्या को अपने भीतर खींच लेनेवाली यह मणि बड़ी महिमाएँ रखती है। उसकी मदद से वह सभी तरह की विपदाओं से सुरक्षित होकर सोने से अपनी सारी इच्छाओं की पूर्ति करता हुआ अपनी पत्नी के साथ सुखपूर्वक ज़िंदगी बिताने लगा।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जून १९८३ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

P. R. Shinde

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५०)रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

फ़रवरी के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : छुक छुक हमारी रेल चली!

द्वितीय फोटो : हम सखियां पनघट पे चलीं!!

प्रेषिका : कु. शशी टक्कर, आनन्द भवन, रेड रोड, ज्योति नगर, कुरुक्षेत्र-१३२११८

पुरस्कार की राशि रु. ५० इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

जब सभी दोस्तों के लिए है टिंकल का समय,

तुम क्यों गुमसुम बैठे हो? झटपट तुम भी टिंकल लाओ

पढ़ो, सीखो, मौज मनाओ!

टिंकल — छत्तीस पृष्ठों वाली मनभावन पत्रिका— मज़ेदार कहानियाँ। विज्ञान व प्राणी जीवन सम्बंधी दिलचस्प लेख। बूझने-बुझाने के लिए "पहेली-पिटारी" —अपनी बुद्धि आज़माओ, औरों को बनाओ। और फिर कालिया कौवे और उसके जंगल के साथियों के कारनामों का तो कहना ही क्या।

इसलिए, तुम भी "टिंकल" को अपनाओ — जी भर कर मज़ा उड़ाओ।

रंग उमंगभरी टिंकल — हर बच्चे की मनभावन पत्रिका!

टिंकल

वार्षिक चंदा (२४ अंकों का) रु. ३२/-
निम्नलिखित पते पर भेजें —
पार्थ बुक्स डिविज़न,
नव प्रभात चेम्बर्स, रानडे रोड, दादर,
बम्बई-४०० ०२८.
(बम्बई के बाहर चेक्स के लिए रु. ३/- अतिरिक्त)
वितरक:
इंडिया बुक हाउस
बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, चंडीगढ़, मद्रास,
बंगलोर, हैदराबाद,पटना, त्रिवेंद्रम

Contour Ads-IBH-821E/82 Hin

निःशुल्क प्रवेश

चन्दामामा कॅमल

रंग प्रतियोगिता

पुरस्कार जीतिए

कॅमल

पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (३) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-
१० प्रमाणपत्र

इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ६६२८, कुलाबा, बम्बई ४०० ००५.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name: .... Age: ....

Address: ....

....

प्रवेशिकाएं 30-4-1983 से पहले पहले भेजी जायें.

CONTEST NO 30

निःशुल्क प्रवेश यहां काटिए

Vision/CPL 83026 HIN

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 27 (Hindi)

1st Prize: Meenakshi I. Vasu, Bombay-400 067. *2nd Prize:* Rajesh Bhargao Meshram, Bhandara. Gireesh Vasant Chiddarwar, Yeotmal. Jagir Singh, Haddo Andaman. *3rd Prize:* Gireesh Vasant Ciddarwar, Yeotmal. Jawahar Prabhu Raj Upase, Solapur-413 001. Nanda B. Paigwal, Saoner. Arun Kumar Thapa, Golmuri. Tarsem Singh, Rajnandgaon (M.P.). Anil Kumar Gupta, Nainital-263 145. Rohit Khemka, Kahalgaon. Shitalkumar B. Chatre, Miraj. Jasbindar Singh, Rourkela-3. Arun Kumar Sinha, Golmuri.

READY, STEADY, GO!
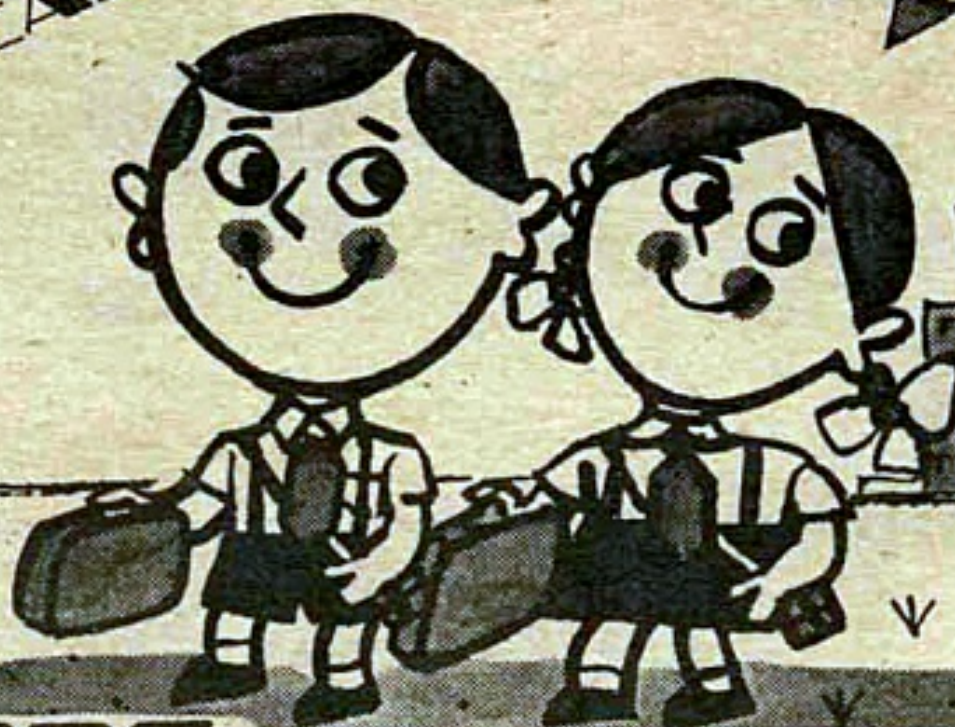
WITH

Jalans SCHOOL BAG

* It is for you, light as you wanted it to be, but roomy enough for all your books, tiffin box, pencil box and even comics.

Created in colours of Cherry Navy blue, Green..........to match your School Uniform and likes. Carry it anywhere you want after school to swim, picnics or even a short holiday.

like it ? Now get your folks to present you one on your birthday.

* INDIA'S First Moulded School Bag made for you by—
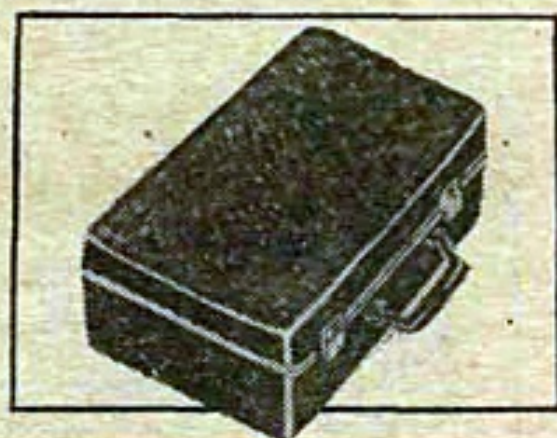
अंग्रेजी बोलचाल सिखाने वाला औरों से बिल्कुल भिन्न प्रभावी पद्धति पर आधारित जो आपको कुछ प्रभावी शब्द और वाक्य नहीं रटाता बल्कि अंग्रेजी भाषा की गहरायी तक पहुंचकर आपको भाषा पर पूरा अधिकार करने की विशिष्ट क्षमता प्रदान करता है।

अंग्रेजी भाषा के मर्म को गहराई से समझाने वाला एक ऐसा प्रभावी कोर्स जिसे अपनाकर आप महसूस करेंगे कि आपने वही पाया है जिसकी वर्षों से आपको तलाश थी।

5/- मनीआर्डर से एडवांस भेजने पर डाक व्यय फ्री। यह उपहार केवल 31 मार्च तक उपलब्ध है।

डायमंड इंगलिश स्पीकिंग कोर्स

मूल्य : 21 रु.

डाकव्यय : 5 रु.

नये डायमंड कामिक्स

अंकुर और चाचा चौधरी का अपहरण	पिंकी और साबुन के बुलबुले	लम्बू मोटू मौत का युद्ध	मामा भांजा और चालाक बनिया	माटी मेरे देश की
3.00	3.50	3.50	3.50	3.50

डायमंड कामिक्स प्रा. लि.

2715 दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

PUBLICO-DC-699

Campa
Campa
Campa
Campa
कैम्पा के संग संग
लेते मज़ा हम!
कैम्पा आरेंज फ्लेवर - मौजमस्ती का स्वाद!
OBM/5361

'जब मैं बड़ा होऊंगा न,
कॉमिक्स ही पढूंगा,
और बिस्किट ही खाऊँगा...'
पारले
TARA
JERRY
बच्चों को भाये पारले ग्लूको–
स्वाद में निराले, शक्ति से भरपूर
PARLE
Gluco
BISCUITS
पारले
ग्लूको
भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट